मास्टर ऑफ आर्ट्स (इतिहास)

एम.ए. (इतिहास)
द्वितीय वर्ष

मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक इतिहास : १२०६ ई से १५२६ ई तक

(प्रथम प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट [सतना] म.प्र. - ४८५३३४

मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक इतिहास : 1206 ई से 1526 ई तक

ई–संस्करण 2023–24 / MAHS-II-122

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :

प्रो. भरत मिश्र

कुलपति

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

पाठ्यक्रम निर्माण

डा. अभय वर्मा

पाठ्यक्रम संयोजक

डा. त्रिभुवन सिंह

पाठ्यक्रम अभिकल्पना एवं सम्पादक मण्डल :

डॉ. कमलेश थापक डॉ. अभय वर्मा

डा. त्रिभुवन सिंह डॉ. नीलम चौरे

मुद्रण प्रस्तुति

डॉ. सन्तोष अरसिया, उपकुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सन्तोष राजपूत, सहायक कुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सम्पर्क सूत्र :

डॉ. कमलेश थापक, निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

दूरभाष– 07670–265460, E-mail – directordistancemgcgv@gmail.com, website : www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

प्राक्कथन...

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तपोस्थली, मंदाकिनी नदी के सुरम्य तट पर स्थापित महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय भारतरत्न नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन और संकल्पों की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो म.प्र.शासन द्वारा 12 फरवरी, 1991 को विशेष अधिनियम 09, 1991 द्वारा स्थापित हुआ।

विश्वविद्यालय का ध्येय वाक्य है–'विश्वं ग्रामे प्रतिष्ठितम्' अर्थात ग्राम विश्व का लघु रूप है। विश्वविद्यालय चित्रकूट में स्थित है, जो एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। नई पीढ़ी के लिये यह स्थान आदर्श एवं प्रेरणा का केन्द्र है।

विश्वविद्यालय में कृषि, प्रबंधन, अभियांत्रिकी, लोक विज्ञान, ग्रामीण विकास एवं स्थानीय स्वशासन, लोक शिक्षा, कला, संस्कृति एवं साहित्य सहित सभी अकादमिक धारायें प्रभावी रूप में उपस्थित हैं। विश्वविद्यालय, ग्राम को समाज जीवन की मूल इकाई मानकर शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध और प्रसार कार्यों से सर्वांगीण विकास के लिए विगत 3 दशकों से अधिक समय से समर्पित प्रयास कर ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के संकल्प में लगा हुआ है। विश्वविद्यालय ने अपनी गतिविधियों और कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल विकास के उन्नयन एवं प्रमाणन तथा सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है तथा शासन के सहयोगी के रूप में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान की परम्परा के आलोक में आई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 चिरवांछित जन आकांक्षाओं की सम्यक् अभिव्यक्ति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के युगान्तरकारी प्रावधानों को लागू करने में मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य रहा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नवाचारों के लिए सकारात्मक और अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विद्यार्थियों की पठन–पाठन की स्वतंत्रता, कौशल विकास के समुचित अवसर तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार आने वाले भविष्य के लिए तैयार करने की प्रतिबद्धता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों में स्पष्टतः दिखाई देती है।

विश्वविद्यालय ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों को दूरवर्ती के विभिन्न पाठ्यक्रमों में अर्थपूर्ण रूप से जोड़कर इन्हें सत्र 2023–24 से पुनः संशोधित/परिवर्धित रूप में प्रारम्भ किया है। विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के प्रसार एवं रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु दूरवर्ती माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष प्रयास कर रहा है। दूरवर्ती पद्धति से संचालित विभिन्न पाठ्यक्रमों में नियमित संपर्क कक्षाओं के आयोजन, उच्च शिक्षा की स्व–अध्ययन सामग्री एवं नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी को बेहतर शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चत की जा रही है।

विश्वविद्यालय के दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र द्वारा सत्र 2024–25 में संचालित परास्नातक, स्नातक तथा डिप्लोमा स्तरीय दूरवर्ती पाठ्यक्रमों के शिक्षार्थियों हेतु ई–स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष का अनुभव हो रहा है।

पाठ्यक्रम से जुडे सभी शिक्षार्थियों, अभिभावकों, प्रशासकों, समन्वयकों और अन्य सभी को मेरी मंगलकामनायें

प्रो. भरत मिश्रा
कुलपति

मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक इतिहास : 1206 ई से 1526 ई तक

(प्रथम प्रश्नपत्र)

इकाई—1

संरचना

1.1 प्रस्तावना

इकाई—1 में हम मध्यकालीन भारतीय इतिहास जानने के साधनों, दिल्ली सल्तनत के प्रथम वंश गुलाम वंश के सुल्तानों— ऐबक, इल्तुतमिश, रजिया, बलबन और उसके उत्तराधिकारियों के काल की उपलब्धियों का अध्ययन करेंगे।

परिचय

मध्यकालीन भारतीय इतिहास को हम सल्तनत काल (1206—1526) और मुगलकाल (1526—1761) में विभाजित कर अध्ययन करते हैं। इस काल के इतिहास जानने में हम साहित्यिक रचनाओं, विदेशियों के यात्रा वृत्तांत और पुरातात्विक स्रोतों का सहारा लेते हैं।

दिल्ली सल्तनत में कुल पाँच वंशों— गुलाम वंश (1206—1290), खिलजी वंश (1290—1320), तुगलक वंश (1320—1413), सैय्यद वंश (1414—1451) तथा लोदी वंश (1451—1526) ने शासन किया। मुगल वंश के बादशाहों ने 1526 से 1857 ई. तक अपने वंश की प्रतिष्ठा की बनाये रखा। बहादुरशाह जफर, 1857 ई. की क्रान्ति का नेता था।

1.2 उद्देश्य

प्रथम इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान सकेंगे—

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में प्रथमतः दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों और द्वितीयतः मुगल वंश के बादशाहों ने शासन किया।

- मध्यकालीन इतिहास जानने के साहित्यिक साधनों से परिचित हो सकेंगे।
- मध्यकालीन इतिहास जानने के विदेशी यात्रियों के वृत्तांतो का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- मध्यकालीन इतिहास जानके पुरातात्विक साधनों से अवगत हो सकेंगे।
- दिल्ली सल्तनत के गुलाम वंश के सुल्तानों के काल की उपलब्धियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.3 मध्यकालीन इतिहास जानने के साहित्यिक साधनों को हम मोटे तौर पर सल्तनत कालीन और मुगल कालीन साहित्यिक स्रोतों में विभक्त कर अध्ययन करते हैं—

1.3.1 सल्तनतकालीन साहित्यिक स्रोत

सल्तनत कालीन इतिहास के अध्ययन के लिए पुरातात्विक स्रोतों की अपेक्षा साहित्यिक स्रोत अधिक उपयोगी है। भारत में तुर्की विजय और सल्तनत की स्थापना के पश्चात् फारसी भाषा में लिखी गई ऐतिहासिक कृतियों की संख्या अधिक है। साहित्यिक स्रोतों के अन्तर्गत सामान्य ऐतिहासिक ग्रन्थों, जीवनियों, यात्रा–वृत्तांतो, प्रशासनिक दस्तावेजों इत्यादि पर विचार करेंगे।

ऐतिहासिक रचनाएँ

ऐसी रचनाओं में प्रमुख है मिनहाज–उस–सिराज की तबकाते नासिरी। तबकाते नासिरी में इस्लाम के उदय से पूर्व विभिन्न पैगम्बरों की जीवनी और इस्लाम की उत्पत्ति से लेकर इल्तुतमिश द्वारा संगठित समसी सामंतो के दल का इतिहास है। संपूर्ण रचना 23 अध्यायों में विभक्त है जिन्हें श्तबकातश कहा जाता है। इस पुस्तक में पहली बार दिल्ली सल्तनत का क्रमबद्ध विवरण देखा जाता है। मिनहाज ने जहाँ अपना इतिहास समाप्त किया, बरनी ने वहीं से अपने इतिहास का आरम्भ किया। वस्तुतः भारत पर तुर्की आक्रमणों, दिल्ली सल्तनत की स्थापना और इल्तुतमिश के शासन काल के इतिहास के लिए मिनहाज की पुस्तक एक विश्वसनीय स्रोत है। दूसरी कृति जियाउद्दीन बरनी की तारीख–ए–फीरोजशाही है। यह सल्तनत काल की अत्यंत महत्वपूर्ण रचना है, जो खिलजी और तुगलक काल की राजनीतिक और सांस्कृतिक क्रिया कलापों की जानकारी देती है।

बरनी की फतवा–ए–जहाँदारी, विविध विषयों पर उनके विचारों की अभिव्यक्तिमात्र है। बरनी ने इस पुस्तक में अपने राजनीतिक आदर्शों को रखने का प्रयास किया है। शम्स–ए–शिराज अफीफ ने अपनी पुस्तक तारीख–ए–फीरोजशाही में फीरोजशाह तुगलक के राज्यकाल की स्थिति का वर्णन 90 अध्यायों में किया है। इसमें फीरोजशाह तुगलक के जीवन और कार्यो का भी वर्णन है। यह पुस्तक तैमूर के आक्रमण के तुरन्त बाद लिखी गई थी। हिन्दुओं के पति अफीफ का विचार मिनहाज और बरनी से ज्यादा उदार था। अफीफ यह भी मानते थे कि ऐतिहासिक कार्य ईश्वर द्वारा ही निर्धारित होता है। बदरुद्दीन द्वारा रचित शाहनामा में मुहम्मद बिन तुगलक के कार्य कलापों का वर्णन किया गया है।

अमीर खुसरों ने 1289–1325 के मध्य अनेक श्मसनवीश लिखे। किरान–उस–सादेन में बुगरा खाँ और उसके बेटे कैकुवाद के मिलन के दृश्य के अतिरिक्त शाही दरबार, अमीरों और राजकीय पदाधिकारियों के जीवन का दिलचस्प वर्णन किया गया है मिफता–उल–फुतुह में जलालुद्दीन खिलजी के सैनिक अभिषानों एवं अन्य राजनीतिक घटनाओं का उल्लेख मिलता है। खुसरों की अन्य रचनाओं में आशिका, नूह सिपिहर और तुगलक–नामा उल्लेखनीय है।

सल्तनत काल में अन्य अनेक ग्रन्थ (अरबी, फारसी, संस्कृत, हिन्दी और क्षेत्रीय भाषाओं में) भी लिखे गये जो सल्तनत कालीन इतिहास पर प्रकाश डालते है। ऐसे ग्रन्थों में फखरुदीन की तारीख–ए–फखरुद्दीन, फीरोजशाहतुगलक की आत्मकथा फतुहात–ए–फीरोज–शाही एवं ख्वाजा अब्दुल मलिक इसामी की पुस्तक फुतूह अस सलातीन प्रमुख है।

सल्तनत काल में कुछ अन्य ऐसी रचनाएँ भी हुई जो इतिहास लेखन में सहायक हैं। इनमें प्रमुख हैं विभिन्न सूफी संतों की चरितावली। अमीर हसन सिजजी ने फगदुल फवायद, मीर खुर्द की सियरूल औलिया, अब्दुल हक देहलवी की अखबारूल अख्तियार आदि ग्रन्थ प्रमुख है।

1.3.2 मुगलकालीन साहित्यिक ग्रन्थ

मुगलकालीन साहित्यिक स्रोतों को हम मुख्यतः दो भागों में विभक्त कर सकते हैं–(1) भारतीय – फारसी एवं (2) यूरोपीय साहित्य।

फारसी साहित्य के अन्तर्गत सामान्य इतिहास से सम्बन्धित रचनाएँ, जीवन–वृत्तान्त सरकारी और गैर सरकारी ऐतिहासिक रचनाओं, आत्मकथाओं तथा प्रशासकीय दस्तावेजों, सरकारी पत्रों इत्यादि को रखा जा सकता है। कुछ मुगल बादशाहों ने अपनी जीवनियाँ एवं संस्मरण भी लिखे, जिनसे तत्कालीन इतिहास पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। इस श्रेणी में सबसे महत्वपूर्ण रचना है बाबर की आत्मकथा–तुजुक–ए–बाबरी अथवा बाबरनामा। यह तुर्की में लिखी गई थी बाद में इसका फारसी में अनुवाद हुआ। बाबर की बेटी और हुमायूँ की बहन गुलबदन बेगम ने हुमायँनामा लिखी। इससे हुमायूँ के कार्यकलापों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारियाँ मिलती है। जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा तुजुक–ए–जहाँगीरी लिखनी आरम्भ की, लेकिन उसे पूरा नहीं कर सका। मोतमिद खाँ ने इसे बाद में पूरा किया।

तबकात श्रेणी

मुगलकालीन इतिहास पर तबकात श्रेणी की रचनाओं से महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। इस श्रेणी के अन्तर्गत प्रमुख है तबकात–ए–अकबरी, बदायूँनी की मुन्तखाब निजामुद्दीन अहमद की उत–तवारीख, फरिश्ता का गुलशन–ए–इब्राहिमी तथा खफी खाँ की मुन्तख–उल–लुबाब।

दरबारी ऐतिहासिक ग्रन्थ

मुगलकाल में दरबारी इतिहास भी लिखे गये। दरबारी इतिहास लेखन का प्रारम्भ अकबर के समय में हुआ। दरबारी ऐतिहासिक ग्रन्थों में अबुलफजल की अकबरनामा एवं एवं आइने–अकबरी प्रमुख है। मोतमिद खाँ ने इकबालनामादृएदृजहाँगीरी और अब्दुल हमीद लाहौरी ने पादशाहनामा लिखी। औरंगजेब के शासन काल में मिर्जा मुहम्मद काजिम ने इसी परम्परा में आलमगीरनामा की रचना की, परन्तु अपने शासन के 11 वें वर्ष में औरंगजेब ने इतिहास – लेखन पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

क्षेत्रीय ऐतिहासिक ग्रन्थ

मुगलकाल में क्षेत्रीयं इतिहास पर कुछ ग्रन्थों की रचना हुई। ऐसी रचनाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं मु. अली खाँ का मिरत–ए–अहमदी तथा गुलाम हुसैन का रियाजुस–सलाती। प्रशासनिक ग्रन्थ प्रशासनसे सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण स्रोत दस्तुर–ए–अमल के अन्तर्गत आने वाली रचनाएँ हैं। इस श्रेणी का महत्वपूर्ण ग्रन्थ अबुल फजल रचित आइन–ए–अकबरी है जिससे अकबर के प्रशासन पर प्रकाश पड़ता है। प्रशासनिक विषयों पर इंशा श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले प्रशासकीय पत्रों से भी जानकारी मिलती है। इस श्रेणी की अनेक

रचनाएँ जैसेइंशा–ए–अबुलफजल, इंशा–ए–यूसुफ, दस्तुर–ए–अमल–ए–टोडरमल,रूक्कत–ए–आलमगीरी इत्यादि। फारसी के अतिरिक्त मुगल काल में उर्दू, हिन्दी, संस्कृत एवं क्षेत्रीय भाषाओं में भी अनेक ग्रन्थ लिखे गये। इनसे राजनीतिक एवं प्रशासनिक इतिहास पर तो कम प्रकाश पड़ता है, परन्तु सांस्कृतिक इतिहास के अध्ययन के लिए ये बहुमूल्य स्रोत हैं।

1.4 विदेशियों के यात्रा वृत्तांत

सल्तनत काल में भारत आने वाले यात्रियों के वृत्तांतों से तत्कालीन राजानीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

1.4.1 सल्तनत कालीन विदेश यात्रा वृत्तांत

सल्तनतकाल के आरंभिक विदेशी यात्रियों में अलबरूनी का उल्लेख किया जा सकता है। उसकी सबसे अधिक विख्यात रचना किताबुल हिन्द है। उसका विवरण तत्कालीन (11 वीं शती) भारतीय सामाजिक जीवन को जानने का महत्वपूर्ण स्रोत है। अलबरूनी के पश्चात् भारत आने वाले यात्रियों में सबसे प्रमुख इतावली यात्री मार्कोपोलो (1295 ई.) एवं मोरक्को निवासी इब्नेबतूता है। मार्कोपोलो ने अपने ग्रन्थ ट्रैवेल्स (ज्तंअमसे) में भारत की आर्थिक स्थिति एवं व्यापार की स्थिति पर प्रकाश डाला है। इब्नेबतूता 1333 ई. में अफ्रीका से भारत आया। उसने ‘रेहालाश नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें उसने मुहम्मद बिन तुगलक के दरबार उस समय की प्रशासनिक व्यवस्था, सामाजिक एवं राजनीतिक, संस्थाओं, आर्थिक स्थिति, डाक की व्यवस्था, सड़कों की व्यवस्था, गुप्तचर व्यवस्था, कृषि उत्पादन, त्यौहार और उत्सव, संगीत इत्यादि का बड़ा सुन्दर विवरण प्रस्तुत किया है। सल्तनत काल में भारत आने वाले अन्य प्रमुख यात्रियों में इतावली यात्री निकोलो कोंटी (1414– 19) अरब सौदागर अब्दुर्रज्जाक (1442–44 ई.) चीनी यात्री माहुआन (1451 ई.), पुर्तगाली नाविक वास्को– दी गामा (1498द्1538 ई.), पुर्तगाली अधिकारी बारबोसा (1508 ई.), वार्तेमा एवं पायज तथा रूसी यात्री अफानासी निकितिन का उल्लेख किया जा सकता है। इन यात्रियों ने सल्तनतकालीन राजनीतिक अवस्था के अतिरिक्त विजय नगर साम्राज्य गुजरात, बंगाल, उड़ीसा एवं अन्य क्षेत्रों की आर्थिक समृद्धि का आँखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है। 13 वीं शताब्दी में तिब्बती यात्री धर्मस्वामी भी भारत आए। उनके यात्रा विवरण से पूर्वी भारत की स्थिति और आरम्भिक तुर्की द्वारा उस क्षेत्र में सत्ता की स्थापना के प्रभाव की जानकारी मिलती है।

1.4.2 मुगलकालीन विदेशी यात्रा वृत्तांत

मुगलकालीन इतिहास की जानकारी के लिए यूरोपीय साहित्य भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इस श्रेणी के स्रोतों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है (1) यूरोपीय यात्रियों एवं व्यापारियों के यात्रा–विवरण (2) यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों के दस्तावेज। विदेशों से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ने के कारण समय–समय पर अनेक यात्री भारत आए। ऐसे यात्रियों में मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं राल्फ फिच, विलियम हॉकिंस, एडवर्ड टेरी, पीटर मुंडी (अंग्रेज), ट्रैवर्नियर, बर्नियर (फ्रांसीसी), मौंसरेट एवं पेलार्ट (डच), डीं कास्ट्रो (पुर्तगाली), मनूची (इटालियन) तथा रूसी यात्री निकितन। इन यात्रियों ने भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक एवं सांस्कृतिक स्थिति का आँखों देखा विवरण लिखा है।

यूरोपीय यात्रा–वृत्तांतो में जेसुईट पादरियों के वृत्तांतो का विशेष महत्व है। अकबर के दरबार में अनेक जेसुईट मिशन आए। इन पादरियों के विवरणों से अकबर के दरबार और उसकी धार्मिक नीति, दरबार की सामजिक संरचना एवं प्रशासनिक विषयों की जानकारी मिलती है। इसी प्रकार डच, पुर्तगाली, अंग्रेजी और फ्रांसीसी व्यापारिक कम्पनियों के दस्तावेजों से तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था–वस्तुओं के मूल्य, उनके उत्पादन, शिल्प, परिवहन के साधनों, व्यापार आदि के विषय में जानकारी मिलती है।

1.5 पुरातात्विक स्रोत

मध्यकालीन भारतीय इतिहास जानने के स्रोतों में पुरातात्विक स्रोतों की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। पुरातात्विक स्रोतों को सल्तनत कालीन एवं मुगलकालीन दो भागों में बांट कर अध्ययन करेंगे।

1.5.1 सल्तनतकालीन पुरातात्विक स्रोत

सल्तनत काल में अनेक भवनों का निर्माण हुआ। इस समय के भग्नावशेषों को देखकर तत्कालीन कलात्मक प्रगति एवं राज्य की समृद्धि का अनुमान मिलता है। इस समय के अनेक महत्वपूर्ण इमारतें जैसे– कुवत–उल–इस्लाम, कुतुबमीनार, अलाईदरबाजा, फीरोजशाह कोटला इत्यादि कलात्मक विकास से हमें परिचित कराती हैं। सल्तनत काल में मस्जिदों एवं अन्य भवनों की दीवारों पर फारसी में अभिलेख खुदवाए गए, परन्तु शाहीअभिलेखों की संख्या बहुत कम है। अधिकांश अभिलेख व्यक्तिगत हैं तथापि उनमें शासकों के नामों और तिथियों का भी उल्लेख किया गया है। सल्तनतकालीन सिक्कें भी इतिहास की जानकारी के एक प्रमुख स्रोत हैं।

1.5.2 मुगलकालीन पुरातात्विक स्रोत

अभिलेखों से विभिनन शासकों के राज्य की सीमा एवं शासन काल के तिथिक्रम के निर्धारण में सहायता मिलती है। मुगलकाल में विभिन्न शासकों ने विभिन्न आकार–प्रकार, धातु एवं मूल्य के सिक्के ढलवाए। इन्हें देखकर शासन–विशेष की आर्थिक स्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है। सिक्कों पर खुदी इबारतों से तिथिक्रम एवं सम्राटों की उपाधियों का भी पता चलता है। तत्कालीन किलों, मस्जिदों, इत्यादि को देखकर स्थापत्यकला की प्रगति का आगरा का किला, दिल्ली का अनुमान लगा सकते हैं। इनमें से अनेक जैसे लाल किला, फतेहपुर सिकरी, जामा मस्जिद, ताजमहल इत्यादि अभी भी अच्छी स्थिति में हैं। इन्हें देख कर मुगलों की कलात्मक अभिरुचि एवं आर्थिक सम्पन्नता का अंदाज लगाया जा सकता है। इन विविध स्रोतों का समुचित उपयोग कर हम मुगल इतिहास की जानकारी प्राप्त करते हैं।

1.6 कुतुबुद्दीन ऐबक (1206–10)

दिल्ली का पहला तुर्क शासक कुतुबुद्दीन ऐबक था और उसी को भारत में तुर्की– राज्य का संस्थापक भी माना जाता है। वह ऐबक नामक तुर्क जनजाति का था और तुर्किस्तान का रहने वाला था। बचपन में वह दास के रूप में नैशापुर (ईरान) के बाजार में लाया गया। वहाँ उसे काजी फखरूद्दीन अब्दुल अजीज कूफी ने खरीद लिया। काजी ने उसे धनुर्विद्या

और घुड़सवारी की शिक्षा दी। ऐबक ने कुरान पढ़ना भी सीख लिया और इसीलिए वह कुरानख्वां (कुरान का पाठ करने वाला) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाद में वह नैशापुर से गजनी ले जा कर बेच दिया गया। उसे मुहम्मद गोरी ने खरीद लिया। मुहम्मद गोरी ने उसे अमीरदृएदृआखूर (शाही घुड़साल का अधिकारी) के पद पर प्रोन्नत कर दिया। इस पद पर रहते हुए ऐबक ने गोर, बामियान और गजनी के युद्धों मेंसुल्तान की सेवा की। बाद में तराई के युद्ध में उसने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उसके कार्यों से प्रसन्न होकर गोरी ने उसे क्रमशः कुहराम और समाना का प्रशासक नियुक्त किया। वस्तुतः 1192–1206 ई. तक उसने गोरी के प्रतिनिधि के रूप में उत्तरी भारत के विजित भागों का प्रशासन संभाला।

मुहम्मद गोरी की जिस समय (1206 ई.) मृत्यु हुई उस समय उसके भारतीय क्षेत्रों का प्रबन्ध कुतुबुद्दीन ऐबक के हाथों में था। गोरी की मृत्यु के पश्चात् गोरी का भतीजा गयासुद्दीन मुहम्मद गोर का शासक बना। गोर साम्राज्य के अवशेषों पर कब्जा जमाने के लिए तीन व्यक्ति लालायित थे ताजुद्दीन ऐल्दूज, नासिरुद्दीन कुबाचा तथा कुतुबुद्दीन। कुतुबुद्दीन ऐबक ने गयासुद्दीन के पास यह खबर भेजी की अगर वह ऐबक को भारत का शासक स्वीकार कर ले, तो ऐबक उसे ख्वारिज्मशाह के विरुद्ध सहायता देगा। सुल्तान ने उसकी बात मानकर उसे भारत का शासक स्वीकार कर लिया। सुल्तान की अनुमति प्राप्त करने के पश्चात् ऐबक का राज्याभिषेक 25 जून, 1206 को लाहौर में हुआ, यद्यपि उसने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाई। 1208 ई. में सुल्तान गयासुद्दीन मुहम्मद ने उसे (ऐबक को) दासता से मुक्त कर वैध रूप से दिल्ली का स्वतन्त्र सुल्तान स्वीकार कर लिया। इतना ही नहीं, उसने ऐबक के पास सिंहासन, छत्र, आदि भेजकर उसे सुल्तान की पदवी से विभूषित किया। इस प्रकार भारत में दिल्ली सल्तनत की स्वतन्त्र सत्ता स्थापित हुई।

अपनी आन्तरिक स्थिति मजबूत कर ऐबक ने बदायूँ पर अधिकार कर लिया और इल्तुतमिश को वहां का प्रशासक बहाल किया। कालिंजर और ग्वालियर हाथ से निकल गए। जिन राज्यों ने कर देना बंद कर दिया था उनसे पुनः कर वसूला जाने लगा और तुर्की सत्ता स्थापित की गई। 1210 ई. में चौगान खेलते समय घोड़े से गिर कर उसकी मृत्यु हो गई।

1.6.1 ऐबक का योगदान

ऐबक ने तुर्की शासन की नींव डाली। अपनी दानशीलता के कारण वह श्लाखबख्श (लाखों का दान करने वाला) के नामसे विख्यात था। वह साहित्यदिल्ली और कला का संरक्षक था। हसन निजामी और फर्रुखमुद्दीर उसके प्रसिद्ध विद्वान थे। उसने दो प्रसिद्ध मस्जिदों का निर्माण भी कखाया का कुवत–उल इस्लाम और अजमेर का ढाई दिन का झोपड़ा।

1.7 इल्तुतमिश(1211–36 ई.)

इल्तुतमिश इल्बरी तुर्क था। दिल्ली में ही कुतुबुद्दीन ने उसे अपने दास के रूप में खरीदा। इल्तुतमिश शीघ्र ही कुतुबुद्दीन ऐबक का विश्वासपात्र बन गया। उसे सरजानदार (शाही अंगरक्षकों का सरदार) नियुक्त किया गया। इल्तुतमिश की प्रशासनिक क्षमता से प्रभावित हो कर कुतुबुद्दीन ने उसे अन्य प्रशासनिक पद भी सौंपे। उसे अमीर–ए–शिकार का पद दिया गया। 1200 ई. में वह ग्वालियर नगर का अमीर बना। उसने क्रमशरू ग्वालियर, बरन और बदायूँ के इक्तादार के रूप में भी कार्य किया। 1205 ई. में इल्तुतमिश को ऐबक ने दासता

से मुक्त कर दिया। इसके बाद उसे बदायूँ का प्रशासक नियुक्त किया गया। ऐबक ने अपनी एक पुत्री का विवाह भी उसके साथ कर दिया।

कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के पश्चात् आरामशाह गद्दी पर बैठा। जिसकी हत्या कर इल्तुतमिश गद्दी पर आसीन हुआ। इस प्रकार दिल्ली में ऐबक के वंश के स्थान पर इल्बरी वंश का शासन आरम्भ हुआ।

गद्दी पर बैठते ही इल्तुतमिश ने पंजाब और गजनी के मुस्लिम गवर्नर ताजुद्दीन यल्दुज, सिन्ध और मुल्तान के मुस्लिम गवर्नर नासिरुद्दीन कुबाचा और बंगाल में अली मर्दान के विद्रोहों का दमन कर उनसे अपनी अधीनता स्वीकार करवायी। कई राजपूत शासकों ने अपनी खोयी हुई स्वतन्त्रता को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया। इसलिए इल्तुतमिश ने 1226 ई. में रणथम्भोर, 1227 ई. में माण्डू, 1231 ई. में ग्वालियर, 1233 में मालवा और 1234–35 में उज्जैन को जीतकर राजपूतों का दमन किया और लगभग संपूर्ण उत्तर भारत पर अपना प्रभाव स्थापित किया। उसके शासन काल की एक उल्लेखनीय घटना यह थी कि सर्वप्रथम मंगोल भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों तक पहुँच आये थे। 1221 ई. में मंगोल प्रमुख चंगेज खाँ ने खीवा के शासक जलालुद्दीन मंगबरनीका अनुसरण करते हुए सिन्धु तक पहुँच आया था। लेकिन वह सिन्धु नदी के बायें स्थित राज्यों को लूटने के बाद वापस चला गया। किन्तु मंगोल सिन्धु के पार बस गये जो समय–समय पर पंजाब पर आक्रमण करते रहे।

इल्तुतमिश ने चहलगानी या चरगान (चालीस गुलामों का दल) की स्थापना की। राज्य के समस्त महत्वपूर्ण पद इन्हें सौंपे गये। उसे इक्तादारी व्यवस्था की स्थापना का भी श्रेय है। उसने पूरे राज्य को छोटी–छोटी इकाइयों में विभक्त कर दिया। इन इकाइयों को इक्ता की संज्ञा दी गई। इनके अधिकारी इक्तादार कहलाए। बड़े इक्तादार प्रांतीय गवर्नर के रूप में काम करते थे। छोटे इक्तादार केवल सैनिक कार्य करते थे।

इल्तुतमिश ने प्रचलित मुद्रा व्यवस्था (टकसाल) में परिवर्तन किया। उसने प्रचलित सिक्कों की जगह पर अरबी ढंग के टंक चलवाए। टंक पर खलीफा का नाम भी खुदवाया गया। टंकों पर टकसाल का नाम खुदवाने की प्रथा भी इल्तुतमिश ने आरम्भ की। टंक के अतिरिक्त पीतल के जीतल भी जारी किए गए।

कला के क्षेत्र में उसकी सबसे बड़ी देन ऐबक के अधूरे कुतुबमीनार को पूरा करवाना था।

1.8 रजिया सुल्तान (1236–40)

रजिया दिल्ली की प्रथम और अंतिम मुस्लिम सुल्तान थी। वह इल्तुतमिश की समर्थ पुत्री थी और अपने पिता के शासन काल में राजकीय कार्यो का पर्याप्त अनुभव प्राप्त की थी। जब कभी इल्तुतमिश सैन्य अभियान पर जाता था, वह प्रशासन का कार्य रजिया को सौंप देता था।

अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए रजिया ने सुल्तान के पद एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि का भी प्रयास किया। उसने परदा छोड़कर पुरुष का वेष धारण किया। कुबा (कोट) और कुलाह

(टोपी) पहन कर वह दरबार लगाने लगी। उसने पुरुषोंकी तरह शिकार खेलना और घुड़सवारी करना भी आरम्भ कर दिया।वह स्वयं सेना का नेतृत्व करती थी।

लेकिन यह उसका दुर्भाग्य था कि वह एक स्त्री थी। पठान सरदारों ने एक स्त्री के अधीन शासन को अपमानजनक माना। इतना ही नहीं, वह एक अबीसीनियन दास जमालुद्दीन याकूत को अमीर–ए–आखूर (अश्वशाला का प्रधान) नियुक्त किया। वह उसे प्रायः सेना का प्रमुख सेनापति बनाती थी। दूसरे, कट्टर मुस्लिम उसके इस पद्धति से अप्रसन्न थे कि वह बिना घूंघट (बुरका) के जनता के समक्ष उपस्थित होती थी। इन्हीं कारणों से लाहौर और भटिण्डा के गवर्नरों ने विद्रोह कर दिया। जब रजिया विद्रोह को दबाने पहुँची तो भटिण्डा के गवर्नर अल्तुनिया ने रजिया को बन्दी बना लिया इसी बीच रजिया के शत्रुओं ने उसके भाई बहराम को गद्दी सौंप दी। लेकिन रजिया ने अल्तुनिया से विवाह कर लिया और उसकी सहायता से दिल्ली की गद्दी पुनः हस्तगत करने का प्रयास की। लेकिन इस उद्देश्य में वह सफल नहीं हो सकी। उसकी और उसके पति दोनों की हत्या कैथल के समीप 1240 ई. में कर दी गई।

1.9 बलबन और उसके उत्तराधिकारी

दिल्ली के आरम्भिक सुल्तानों में बलबन सबसे महान था। उसने सुल्तान की शक्ति एवं प्रतिष्ठा को नए धरातल पर स्थापित किया, तुर्की राज्य का विस्तार किया तथा एक सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना की।

बलबन (1266–87) का वास्तविक नाम बहाउद्दीन था। वह अपने को अफरासियाब (फारस का प्रसिद्ध वंश) वंश से सम्बद्ध मानता था। अधिकांश इतिहासकारों का मानना है कि बलबन इल्वरी तुर्क जनजाति का था। वस्तुतः बलबन इल्तुतमिश का गुलाम था। अपनी प्रतिमा के बल पर बलबन निरन्तर प्रगति करता गया।

इल्तुतमिश ने आरम्भ में उसे नौकर के रूप में रखा, लेकिन शीघ्र ही उसे चालीसा में शामिल कर लिया। रुकनुद्दीन का विरोध करने एवं रजिया का पक्ष लेने के कारण उसे कुछ समय कारागार में व्यतीत करना पड़ा। रजिया ने सुलतान बनने के पश्चात् बलबन को अमीर–ए–शिकार के पद पर नियुक्त किया। बहराम के समय अमीर–ए–आखूर का पद प्राप्त किया। उसे रेवाड़ी और हाँसी की जागीर भी दी गई। सुल्तान अलाउद्दीन मसूदशाह के शासन काल में बलबन को अमीर–ए–हाजिब का पद सौंपा गया। इसी समय वह मंगालों को पराजित कर उच्छ पर अधिकार कर लिया। सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद के शासन काल में वह नायब मुमलकत बनाया गया और उसे उलुग खाँ की उपाधि प्रदान की गई। उसने मंगोलों की विस्तारवादी शक्ति पर अंकुश लगा दिया। खोंखरों, राजपूतों एवं अन्य विद्रोहियों का दमन किया। अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए बलबन ने अपनी पुत्री का विवाह सुल्तान के साथ कर दिया। सुल्तान ने भी अपनी एक पुत्री का विवाह बलबन के पुत्र बुगरा खाँ के साथ कर दिया।

अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए बलबन ने सर्वप्रथम चालीसा या चरगान के गुट का अंत कर सर्वशक्तिमान बन बैठा। तत्पश्चात उसने दिल्ली के निकटवर्ती प्रदेश को मेवातियों के उत्पात से मुक्त किया, गंगा–यमुना दोआब के डाकुओं का दमन कर अवध के व्यापारिक मार्ग को सुरक्षित किया। इसी प्रकार, बलबन ने कटेहर या बुन्देलखण्ड और पंजाब में भी

शांति की स्थापना की। उसने साल्टरेंज (जूद पर्वतमाला) के विद्रोहियों को भी दंडित किया। 1279 ई. में बंगाल में तुगरिल खाँ के विद्रोह का दमन कर अपने पुत्र बुगरा खाँ को बंगाल का सूबेदार बहाल किया। बलबन के प्रयासों से मंगोल भारत में पंजाब से आगे नहीं बढ़ पाए। यद्यपि बलबन ने सुल्तान के रूप में कोई महत्वपूर्ण विजय हासिल नहीं की तथापि उसके समय तक तुर्की साम्राज्य की सीमा बहुत अधिक विस्तृत हो गयी।

बलबन ने सर्वप्रथम राजत्व–सम्बन्धी सिद्धान्त (Theory of Kingship) का प्रतिपादन किया।

1.9.1 बलबन के उत्तराधिकारी

बलबन ने अपना उत्तराधिकारी कैखुसरो को घोषित किया था किन्तु अमीरों ने बुगरा खाँ के पुत्र कैकुबाद को बादशाह चुना। कैकुबाद 1286 ई. में गद्दी पर बैठा, यह बड़ा अयोग्य था। मंगालों के आक्रमण हो रहे थे। यह उन्हें रोकने में असमर्थ था। राज्य में चारों ओर अशान्ति फैल गई तो पंजाब के सुबेदार जलालुद्दीन खिलजी ने 1290 ई. में दिल्ली पर अमीरों की मदद से आक्रमण किया। कैकुवाद मारा गया और गुलामवंश का अन्त हो गया।

1.10 सारांज

विवेच्य इकाई में हमने मध्यकालीन भारतीय इतिहास जानने के स्रोतों में साहित्यिक साधनों, पुरातात्विक साधनों एवं विदेशी यात्रियों के विवरण को आधार मान कर सल्तनत कालीन प्रथम राजवंश आदि तुर्क या गुलाम वंश के सुल्तानों की उपलब्धियों का अध्ययन किया है। सल्तनत कालीन साहित्यिक स्रोतों के अन्तर्गत सामान्य ऐतिहासिक ग्रन्थ, जीवनियां, यात्रा–वृत्तांत और प्रशासनिक दस्तावेजों का सहारा लिया गया है। मुगल कालीन साहित्यिक स्रोतों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं (1) भारतीय–फारसी एवं (2) यूरोपीय साहित्य द्य भारतीय–फारसी के अन्तर्गत सामान्य इतिहास से सम्बन्धित रचनाएं, जीवन वृत्तांत, सरकारी और गैर सरकारी ऐतिहासिक रचनाओं, आत्मकथाओं, प्रशासकीय दस्तावेजों और सरकारी पत्रों को रखा गया है। यूरोपीय साहित्य विदेशी यात्रियों के विवरण हैं।

पुरातात्विक स्रोतों में तत्कालीन इमारतों, सिक्कों और अभिलेखों को आधार बना कर इतिहास लेखन किया गया है।

विदेशी यात्रियों के दो वर्ग हैं (1) सल्तनतकालीन और मुगलकालीन। सल्तनत कालीन विदेशी यात्रियों में अलबरूनी, मार्कोपोलो, इब्नेबतूता और निकोलोकोण्टी प्रमुख हैं। मुगलकालीन यात्रियों में राल्फ फिच, विलियम हाकिन्स, ट्रैवर्नियर, बर्नियर, मनूची तथा निकितन प्रमुख हैं।

कुतुबुद्दीन ऐबक (1206–10) दिल्ली सल्तनत का प्रथम सुल्तान था। उसी को तुर्की राज्य का संस्थापक माना जाता है। इल्तुतमिश (1211–36 ई.) ऐबक का गुलाम एवं दामाद था। उसे चहलगानी और इक्तादारी व्यवस्था की स्थापना का श्रेय है। रजिया (1236–40) दिल्ली सल्तनत की प्रथम और अंतिम मुस्लिम सुल्तान थी। बलबन (1266–87) ने सुल्तान के रूप में कोई महत्वपूर्ण विजय हासिल नहीं की तथापि उसके समय तक तुर्की साम्राज्य की सीमा

बहुत अधिक विस्तृत हो गयी। वह राजत्व सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वाला प्रथम सुल्तान था। कैकुबाद गुलाम वंश का अंतिम सुल्तान था।

1.11 संभावित उत्तर

दिल्ली सल्तनत में कुल पाँच राजवंशों– गुलाम वंश, खिलजी वंश, तुगलक वंश, सैय्यद वंश और लोदी वंश के शासकों ने शासन किया।

- मुगल काल के बादशाहों ने 1526 से 1757 ई. तक शासन किया।
- मिनहाज–उस–सिराज की कृति है– तबकाते–नासिरी।
- अमीर खुसरों ने अनेक श्मसनवीश लिखे।
- बाबरनामा (बाबर की आत्मकथा) पहले तुर्की में लिखी गई थी बाद में इसका फारसी में अनुवाद हुआ।
- अलबरूनी की कृति किताबुल हिन्द है।
- मार्कोपोलो के यात्रा विवरण से सम्बन्धित पुस्तक का नाम ट्रेवेल्स है।
- इब्नेबतूता के यात्रा विवरण से सम्बन्धित पुस्तक का नाम रेहाला है।
- दिल्ली का पहला तुर्क शासक कुतुबुद्दीन ऐबक था।
- कुतुबुद्दीन ऐबक को भारत में तुर्की राज्य का संस्थापक माना जाता है।
- कुतुबुद्दीन ऐबक अपनी दानशीलता के कारण लाख बख्श कहा जाता है।
- कुतुबुद्दीन ऐबक के दरबार में हसन निजामी और फर्रुखमुद्दीर जैसे–विद्वान रहते थे।
- इल्तुतमिश ने चहलगानी और इक्तादारी व्यवस्था की स्थापना की थी।
- टंको पर टकसाल का नाम खुदवाने की प्रथा भी इल्तुतमिश ने आरम्भ की।
- रजिया दिल्ली की प्रथम एवं अंतिम मुस्लिम सुल्तान थी।
- बलबन ने चहलगानी को समाप्त किया।
- बलबन ने सर्वप्रथम राजत्व सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रतिदान किया।
- कैकुबाद गुलाम वंश का अन्तिम सुल्तान था।

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ / अग्र अध्ययन

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. शर्मा, एल०पी०, श्मध्यकालीन भारतश

2. श्रीवास्तव, ए०एल०, मध्यकालीन भारत, आगरा

अग्र अध्ययन

1. मध्यकालीन भारत, एन0सी0ई.आर0टी0, दिल्ली

2. वर्मा, हरिश्चन्द्र, मध्यकालीन भारत, भाग – 1, दिल्ली

3. वर्मा, हरिश्चन्द्र, मध्यकालीन भारत, भाग – 2, दिल्ली

इकाई—2

संरचना

2.1 प्रस्तावना

इकाई ￼ में हम खिलजी वंश, अलाउद्दीन खिलजी, उसकी विजये, प्रशासन, बाजार नियन्त्रण नीति, तुगलक वंश के सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक, फिरोजशाह तुगलक, सैय्यद वंश, लोदी वंश, बहमनी साम्राज्य और विजय नगर साम्राज्य की उपलब्धियों का अध्ययन करेंगे।

परिचय

गुलाम वंश का अन्त कर जलालुद्दीन खिलजी (1290—96) ने 1290 ई. में खिलजी वंश की स्थापना की। खिलजी वंश के सुल्तानों में अलाउद्दीन खिलजी (1296—1316) सर्वप्रथम था। जिसने उत्तर एवं दक्षिण भारत में सैन्य अभियान कर विजय प्राप्त की, मंगोल आक्रमण से साम्राज्य की सुरक्षा करने का उपाय किया। शासन सम्बन्धी सुधार किये और बाजार नियन्त्रण नीति द्वारा सैनिकों और जनता को उचित मूल्य पर वस्तुएं उपलब्ध कराने की व्यवस्था की। खिलजी वंश के क्रूर एवं अन्तिम सुल्तान खुसरों का बध कर गयासुद्दीन तुगलक ने खिलजी वंश का अन्त किया और तुगलक वंश की नींव डाली। तुलगक वंश के सुल्तानों में मुहम्मद बिन तुगलक अपनी दानवीरता और क्रोधी स्वभाव के लिए विख्यात था। फिरोज तुगलक अपने प्रशासकीय, परोपकार और निर्माण कार्य के लिए इतिहास प्रसिद्ध था। तुगलक वंश के अन्तिम सुल्तान दौलत खाँ को परास्त कर खिज खाँ ने सैय्यद वंश की नींव डाली। खिज्र खाँ (1414—1421) के पश्चात् सैय्यद वंश की गद्दी पर मुबारक खाँ (1421—34), मुहम्मद सैयद (1434—45) और अलाउद्दीन आलमशाह (1445—51) आसीन हुए। सैय्यद वंश के पश्चात् लोदी वंश सत्ता में आया। लोदी वंश का संस्थापक बहलोल लोदी (1451—1488) था। बहलोल लोदी के पश्चात् लोदी वंश में क्रमशः सिकन्दर लोदी (1488—1517) और इब्राहिम लोदी (1517—26) गद्दी पर आसीन हुए। मुहम्मद बिन तुगलक के समय में दक्षिण भारत में हसन गंगू या जफर खाँ ने 1347 ई. में बहमनी साम्राज्य की स्थापना की। बहमनी साम्राज्य मुस्लिम सभ्यता एवं संस्कृति का केन्द्र था। बहमनी वंश के सुल्तानों में अलाउद्दीन हसन बहमन शाह के पश्चात् क्रमशः मुहम्मदशाह प्रथम, ताजुद्दीन फीरोज अहमदशाह प्रथम, अलाउद्दीन अहमदशाह द्वितीय, शम्सुद्दीन मुहम्मदशाह तृतीय आदि ने शासन किया। इसके अवशेषों पर दक्षिण में पाँच स्वतन्त्र राज्यों का उदय हुआ। ये राज्य बीजापुर, अहमदनगर, बरार, गोलकुण्डा और बीदर थे। इसी के समकालीन दक्षिण भारत में विजयनगर साम्राज्य की स्थापना हुई थी। इस राज्य की स्थापना भी मुहम्मद बिन तुगलक के समय में ही हुई। इस राज्य ने दो शताब्दियों से भी अधिक समय तक दक्षिण भारतीय राजनीति पर अपना प्रभाव जमाए रखा। विजयनगर हिन्दू सभ्यता एवं संस्कृति का केन्द्र था। अनेक विद्वानों ने इसे शहिन्दू पुनरुत्थानश का केन्द्र माना है। मुहम्मद बिन तुगलक के राज्यकाल में फैली अव्यवस्था का लाभ उठाकर दो भाईयों— हरिहर और बुक्का ने इस राज्य की स्थापना की। ये दोनों भाई होयसल—काकतियों के यहाँ नौकरी करते थे या फिर होयसलों की अधीनस्थ सामंत थे। उनके पिता का नाम संगम था। काम्पिल पर जब मुहम्मद बिन तुगलक ने आक्रमण किया, तब वह इन दोनों भाईयों को अपने साथ दिल्ली ले गया। शीघ्र ही ये मुहम्मद बिन तुगलक के विश्वासपात्र बन गए। अतः, दूसरी बार जब

काम्पिल में पुनः विद्रोह हो गया, तब अपनी सेना के साथ मुहम्मद बिन तुगलक ने इन्हें भी काम्पिल भेजा। विद्रोह का दमन करने के पश्चात् सन्त विद्यारण्य के प्रभाव में आकर उन लोगों ने विजय नगर के स्वतन्त्र राज्य की नींव डाली। उनके वंश का नामकरण उनके पिता संगम के नाम पर हुआ। 1336–1565 ई. के मध्य विजय नगर में तीन राजवंशों ने शासन किया–संगम वंश (1336–1485), सालुव वंश (1485–1505) तथा तुलुव वंश (1505–1565)।

2.2 उद्देश्य

द्वितीय इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान सकेंगे कि–

- दिल्ली सल्तनत में गुलाम वंश के पश्चात् खिलजी वंश ने सत्ता संभाली। खिलजी वंश के सुल्तानों में अलाउद्दीन खिलजी की विजयों से अवगत हो सकेंगे।
- अलाउद्दीन खिलजी के प्रशासन से परिचित हो सकेंगे।
- अलाउद्दीन खिलजी के बाजार नियन्त्रण नीति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- मुहम्मद बिन तुगलक के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- मुहम्मद बिन तुगलक की योजनाओं से अवगत हो सकेंगे।
- फिरोजशाह तुगलक के प्रशासकीय सुधार, निर्माण कार्य और परोपकार सम्बन्धी कार्यों से परिचित हो सकेंगे।
- सैय्यद वंश और लोदी वंश के काल में घटित घटनाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- बहमनी साम्राज्य की स्थापना से सम्बन्धित तथ्यों से परिचित हो सकेंगे।
- विजय नगर साम्राज्य के इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.3 खिलजी वंश

इल्बरी तुर्की (गुलाम वंश) के पश्चात् दिल्ली की सत्ता खिलजियों के हाथों में चली गई। खिलजियों ने रक्तरंजित क्रांति द्वारा गुलाम वंश की सत्ता समाप्त कर कैमूर्स को बन्दी बनाकर राजसत्ता हथिया ली। इस क्रांति का नेता जलालुद्दीन फीरोज खिलजी था। खिलजी– शासकों के समय में दिल्ली सल्तनत का चरम विकास हुआ।

अलाउद्दीन खिलजी

अलाउद्दीन खिलजी (1296–1316 ई.) दैवी–सिद्धान्त को मानने वाला था। वह बड़ा महत्वाकांक्षी वीर और योग्य शासक था। उसके चार सेनापति उलूग खाँ, जफर खाँ, नुसरत खाँ और अलप खाँ बड़े प्रसिद्ध हुए। बाद में मलिक काफूर बड़ा वीर सेनापति हुआ। वह जलालुद्दीन खिलजी का दामाद और भजीता था। जलालुद्दीन खिलजी ने उसे कड़ा (इलाहाबाद के समीप) का शासक नियुक्त किया और बाद में अवध का भी। उसने उत्तर और दक्षिण भारत में अनेक सैन्य अभियान किये।

2.3.1 उत्तर भारत की विजय

उत्तर भारत विजय की प्रक्रिया में अलाउद्दीन ने सर्वप्रथम 1297 में के गुजरात को जीतने के लिए उलुग खाँ और नुसरत खाँ को भेजा। गुजरात राजा करन अपनी पुत्री के साथ देवगिरि राज्य में शरण ली और गुजरात जीत लिया गया। गुजरात की विजय दो दृष्टियों से उल्लेखनीय है की पत्नी कमला देवी को दिल्ली लाया गया जहाँ अलाउद्दीन खिलजी ने उसके साथ विवाह कर लिया। 2. काम्बे का निवासी और हिन्दू गुलाम काफूर भी 1,000 दीनार में खरीदा गया। इसे ही दक्षिण भारत की विजय का श्रेय दिया जाता है। इतना ही नहीं व्यापार की दृष्टि से भी गुजरात की विजय उपयोगी रहा।

गुजरात की विजय के पश्चात् अलाउद्दीन ने 1299 ई. में रणथम्भौर के शासक हमीर देव को जीतने के लिए एक विशाल सेना भेंजी लेकिन इस सेना को खदेड़ दिया गया और सेनापति नुसरत खाँ की हत्या कर दी गई। तत्पश्चात् स्वयं अलाउद्दीन ने रणथम्भौर पर आक्रमण किया, हमीर देव पराजित हुआ और मार दिया गया। 1301 ई. में रणथम्भौर के किले पर अधिकार कर लिया। उलूग खाँ को रणथम्भौर सौंप दिया गया लेकिन कुछ महीने के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई।

रणथम्भौर को जीतने के पश्चात् अलाउद्दीन, मेवाड़ पर अधिकार करना चाहता था। मेवाड की राजधानी चित्तौड़ थी और वहाँ राना रतन सिंह शासन कर रहा था। कहा जाता है कि राना रतन सिंह की पत्नी पद्मनी बहुत सुन्दर थी और अलाउद्दीन उससे विवाह करना चाहता था। इसी कारण वह चित्तौड़ पर आक्रमण किया। राजपूत अपने बहादुर सेनापतियों गोरा और बादल के नेतृत्व में युद्ध किये किन्तु वे पराजित हुए और 1303 ई. में चित्तौड़ जीत लिया गया। रानी पद्मनी अन्य राजपूत स्त्रियों के साथ जौहर कर ली। कुछ वर्षों के पश्चात् राजपूतों ने पुनः चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया।

मेवाड़ की विजय के पश्चात् अलाउद्दीन ने 1305 ई. में मालवा के शासक राय महलक देव को पराजित कर मार डाला। इस विजय के बाद मालवा के प्रमुख शहरों उज्जैन, माण्डू, धार और चन्देरी पर भी उसका अधिकार हो गया।

2.3.2 दकन की विजय (1305—1311)

उत्तर भारत की विजय के पश्चात् अलाउद्दीन खिलजी ने दकन विजय का कार्य अपने प्रमुख सेनापति मलिक काफूर को सौंपा जिसने 1305—11 के मध्य देवगिरि, तेलंगाना, द्वारसमुद्र और मदुरा को जीत लिया। देवगिरि में यादव वंशीय राजा रामचन्द्र देव शासन करता था। तेलंगाना में काकतीय वंश का शासन था, इसकी राजधानी वारंगल थी। द्वारसमुद्र में होयसलों का शासन था और मदुरा में पाण्ड्य वंशीय शासकों का शासन था। ये सारे राज्य परस्पर संघर्षरत थे इसलिए इनको जीतना सरल था।

सर्वप्रथम मलिक काफूर देवगिरि के राजा रामचन्द्र के विरुद्ध अभियान किया राजा पराजित हुआ और दिल्ली भेंज दिया गया। इसी अभियान के दौरान देवल देवी, जो कमला देवी की पुत्री थी, शाही सेना के हाथ लग गई। उसे दिल्ली भेज दिया गया जहाँ उसका विवाह अलाउद्दीन खिलजी के बड़े पुत्र खिज खाँ के साथ कर दिया गया।

देवगिरि अभियान के पश्चात् मलिक काफूर वारंगल अग्रसर हुआ। वारंगल का शासक प्रताप रुद्र देव एक कड़े प्रतिरोध के बावजूद पराजित हुआ और एक बड़ा उपहार भेंट

किया। इसके पश्चात् काफूर द्वासमुद्र और मदुरा को जीतता हुआ रामेश्वरम् तक पहुँच गया। कहा जाता है कि वहाँ उसने एक मस्जिद का भी निर्माण किया। 1311 ई. में वह दिल्ली वापस आया। इस प्रकार सम्पूर्ण दकन उसके साम्राज्य में सम्मिलित हो गया। दकन की विजय ने अलाउद्दीन को प्रचुर धन प्रदान कर दिया जिससे उसे प्रशासन में सहयोग प्राप्त हुआ।

अलाउद्दीन के समय मंगोलों के अनेक आक्रमण (1296–1308) हुए किन्तु प्रत्येक बार उन्हें खदेड़ दिया गया। उनका सबसे भयानक आक्रमण 1298 ई. में कुतुलुग ख्वाजा के नेतृत्व में हुआ। स्वयं सुल्तान उस अभियान के विरुद्ध एक विशाल सेना के साथ प्रस्तुत हुआ। मंगोल पराजित हुए लेकिन अलाउद्दीन की सेना का सेनापति जफर खाँ इस अभियान में मारा गया। इसके बाद भी मंगोलों के आक्रमण से रक्षा हेतु सुल्तान ने अनेक उपाय किये जैसे– 1. पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्तों में अनेक दुर्ग बनवाये और पुराने दुर्गों की मरम्मत करवायी। 2. इन दुर्गो में सेनापति रखे गये तथा सीमान्त प्रान्तों हेतु विशेष गवर्नरों की नियुक्ति की गई। 3. शाही सेना में अत्यधिक वृद्धि कर दी गई। 4. सभी प्रकार के अस्त्रों का निर्माण हुआ और उसे राजधानी में रखा गया। 5. दिल्ली की चहर दीवारी को अधिक मजबूत किया गया।

उपरोक्त सैन्य अभियानों और विजयों के फलस्वरूप अलाउद्दीन का साम्राज्य पूरब में ब्रह्मपुत्र से पश्चिम में गुजरात तक और उत्तर में हिमालय की तलहटी से दक्षिण में मदुरा तक विस्तृत था। लेकिन यह उल्लेखनीय है कि लगभग संपूर्ण दकन और राजपूताना का एक भाग अलाउद्दीन के समय में स्वतन्त्र हो गये थे।

2.4 प्रशिक्षण

अलाउद्दीन सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप से शासन का सर्वोच्च पदाधिकारी था। राज्य की सारी शक्तियां उसी के हाथ में केन्द्रित थी। वह एक निरंकुश शासक था। वह कार्यकारिणी, न्याय, राजस्व एवं सेना का सर्वोच्च अधिकारी था। राज्य में सारी नियुक्तियाँ उसी की इच्छानुसार होती थी। उसके मंत्री उसके सलाहकार न होकर उसके सेवक के समान थे जिन्हें सुल्तान की आज्ञा का पालन करना पड़ता था। प्रांतीय सुबेदारों (मुक्ताओं) पर भी उसका कठोर नियन्त्रण रहता था।

2.4.1 मंत्रि परिषद

राज्य के महत्वपूर्ण मंत्रियों में वजीर, युद्ध मंत्री, सम्पर्क साधने वाला मंत्री और विदेėा मंत्री थे। वजीर, दीवान–ए–वजारत (वित्त विभाग) का प्रधान होता था। राजस्व वसूली की जिम्मेदारी उसी की थी। युद्ध मंत्री, आरिज–ए–ममालिक कहलाता था। सम्पर्क साधने वाला विभाग दीवान–ए–इंशा था। जिसका प्रधान दबीर–ए–खास होता था। दीवान–ए–रसालत विदेश विभाग था। अलाउद्दीन ने दीवान–ए–रियासत नामक नए विभाग की स्थापना की थी जो व्यापारियों एवं बाजार पर नियन्त्रण रखता था।

2.4.2 न्याय व्यवस्था

सुल्तान स्वयं ही सर्वोच्च न्यायाधीश था। सुल्तान के पश्चात् न्यायिक व्यवस्था का प्रधान सद्र–ए–जहाँ काजी–उल–कुजात था। उसके नीचे नायब काजी या अदल और मुफ्ती होते थे।

प्राप्तों में भी केन्द्र के अनुरूप ही न्यायिक व्यवस्था स्थापित की गई। स्थानीय मामूली झगड़ों को मुखिया और पंचायते सुलझाती थी।

दण्ड विधान अत्यन्त कठोर था। मृत्यु दण्ड, अंग–भंग, कारावास, कोड़े मारने की सजा तथा सम्पत्ति के जब्ती की व्यवस्था की गई थी। कठोर दण्ड द्वारा राज्य में शान्ति व्यवस्था कायम की गई।

2.4.3 गुप्तचर एवं पुलिस व्यवस्था

सुल्तान ने एक कुशल गुप्तचर विभाग का भी संगठन किया गुप्तचर विभाग का प्रधान बरीद–ए–ममालिक था जो बरीद (संदेशवाहक) और मुनहियन या मुन्ही (सूचनाएँ एकत्र करने वाले) की सहायता से इस विभाग का कार्य देखता था। पुलिस विभाग का प्रधान कोतवाल होता था। कोतवाल के नियन्त्रण में ही दीवान–ए–रियासत शहना (दण्डाधिकारी) और मुहतसिब (गैर–इस्लामी बातों को रोकने वाला अधिकारी) कार्य करते थे।

2.4.4 डाक व्यवस्था

डाक व्यवस्था सेना के लिए भी आवश्यक थी। अतः सुल्तान ने अनेक डाक–चौकियों की स्थापना कर वहाँ घुड़सवारों और लिपिकों को बहाल किया। इनके द्वारा सुल्तान को दूरस्थ क्षेत्रों में घटित घटनाओं की सूचना भी शीघ्र ही मिल जाती थी। विद्रोहों तथा युद्ध के अवसरों पर डाक व्यवस्था से पर्याप्त सहायता मिलती थी।

2.4.5 सैनिक सुधार

सैकिन सुधार के क्रम में अलाउद्दीन ने सेना का केन्द्रीकरण किया और एक स्थायी सेना की व्यवस्था की सेना को संख्या के आधार पर (10 हजार, हजार, सौ दस इत्यादि) विभिन्न टुकड़ियों में बाँटकर उन्हें खानों, मलिकों, अमीरों, सिपहसालारों इत्यादि के अन्तर्गत रखा गया। सैनिकों की कुशलता एवं उनके पास घोड़ों के आधार पर नकद वेतन दिया जाता था। अच्छी नस्ल के घोड़े सेना में रखे गये तथा उनके दागने की व्यवस्था की गई। पैदल और हाथी सेना की भी टुकड़ी थी, परन्तु जल सेना नहीं थी।

2.5 बाजार एवं मूल्य नियन्त्रण

अलाउद्दीन, संभवतः सैनिकों को उचित कीमत पर वस्तुएँ उपलब्ध कराने के लिए ही यह व्यवस्था लागू की थी। मूल नियन्त्रण का उद्देश्य जनता को भी राहत पहुँचाना था। बाजार की देख भाल का कार्य दीवान–ए–रियासत को सौंपा गया। यह विभाग सुल्तान के विश्वासपात्र याकूब के अधीन था। उसने सभी वस्तुओं के लिए अलग–अलग बाजारों की व्यवस्था की। उसके अधीन भाहना (बाजारों का अधीक्षक) और बरीद (गुप्तचर अधिकारी) की नियुक्ति की गई। इन अधिकारियों का कार्य बाजार में वस्तुओं के मूल्यों की, बटखरों

की जाँच करना था। सभी व्यापारियों को भाहान–ए–मण्डी में अपने को पंजीकृत करवाना पड़ता था। सिर्फ पंजीकृत व्यापारी ही व्यापार कर सकते थे।

अलाउद्दीन ने विभिन्न वस्तुओं के लिए विभिन्न प्रकार के बाजार संगठित किए और उनके लिए आवश्यक अधिनियम बनाए। ये बाजार मण्डी (गल्ला बाजार), सरा–ए–अदल, घोड़ों, दासों और मवेशियों का बाजार तथा अन्य वस्तुओं के लिए सामान्य बाजार थे। .

2.5.1 मण्डी

नगर के प्रत्येक मुहल्ले में एक केन्द्रीय गल्लामण्डी स्थापित की गई जहाँ अनाज की खरीद–बिक्री होती थी। मण्डी से सम्बन्धित सात अधिनियम बनाए गए। पहला अधिनियम विभिन्न अनाजों के मूल्य निर्धारण से सम्बन्धित था। दूसरे अधिनियम के अनुसार मलिक कबूल उलूग खानी को गल्ला मण्डी की शहना नियुक्त किया गया। उसे विस्तृत अधिकार और सैनिक सहायता भी दी गई। तीसरे अधिनियम के अनुसार यह आज्ञा दी गई कि दोआव की समस्त खालसा भूमि का लगान अनाज के रूप में एकत्रित सरकारी गोदामों में सुरक्षित रखा जाय। चौथे अधिनियम के अनुसार धुम्मकड़ व्यापारियों के नेताओं पर कठोर निगरानी रखी गई। पाँचवें अधिनियम द्वारा मुनाफाखोरी का कठोरता पूर्वक दमन किया गया। छठें अधिनियम के द्वारा दो आब और दिल्ली केआसपास के प्रदेशों के समस्त लगान अधिकारियों से यह लिखित आश्वासन लिया गया कि किसान व्यापारियों को गल्ला अपने खेतों से निश्चित नकद मूल्य पर देंगे और उसने अपने घर न ले जाएँगे। इसी प्रकार किसानों से लगान कठोरतापूर्वक वसूला जाएगा जिससे वे चोर बजारी या मुनाफाखोरी नहीं कर सकेंगे। सातवें अधिनयम के द्वारा यह व्यवस्था की गई गल्लामण्डी की स्थिति की रिपोर्ट शहना, बरीद और मुन्ही प्रतिदिन सुल्तान को भेजेंगे। इन अधिनियमों का कड़ाई से पालन किया गया। फलतः अनाज निश्चित मूल्य पर और सुगमता से उपलब्ध हो गया।

2.5.2 सरा–ए–अदल

सरा–ए–अदल न्याय का स्थान था। यहाँ बाहर से लाया गया तैयार सामान बिकता था। इस बाजार को सरकारी आर्थिक सहायता उपलब्ध थी। इस बाजार से सम्बन्धित पाँच अधिनियम बनाए गए। पहले अधिनियम के अनुसार बदायूँ द्वार के निकट बाजार बनाकर उसमें दुकानें बनाई गई। नगर में बाहर से आने वाली प्रत्येक वस्तु इसी बाजार में आनी थीं। एक टंका से लेकर दस हजार टंका मूल्य तक का सामान सिर्फ यहीं बेचा जाना था। दूसरे अधिनियम द्वारा रेशमी कपड़ों और सूती कपड़ों के मूल्य निश्चित किया गया। तीसरे अधिनियम के अनुसार दिल्ली के सभी व्यापारियों को वाणिज्य मंत्रालय या दीवान–ए–रियासत में पंजीकृत कराने का आदेश दिया गया। उन्हें निश्चित मात्रा में प्रत्येक नगर में माल लाना था एवं सरा–ए–अदल में बेचना था। चौथा अधिनियम मुल्तानी व्यापारियों से सम्बन्धित था। पाँचवें अधिनियम के अनुसार परवाना नवीस (परमीट देने वाला अधिकारी) नियुक्त किया गया।

2.5.3 घोड़ो, दासों और मवेणियों के बाजार

इन तीनों बाजारों के लिए चार सामान्य अधिनियम बनाए गए थे। इनके अनुसार वस्तु की किस्म के अनुसार उसका मूल्य निश्चित किया गया, व्यापारियों और पूँजीपतियों का

बहिष्कार किया गया, बिचौलियों पर कड़ीनिगरानी रखी गई तथा सुल्तान सभी अधिनियमों के पालन पर स्वयं नियंत्रण रखता था। गुप्तचर राजकीय अधिनियमों का कड़ाई से पालन करवाते थे।

2.5.4 सामान्य बाजार

दीवान–ए–रियासत अथवा वाणिज्य मंत्रालय के नियंत्रण में सामान्य बाजार भी स्थापित किए गए। इन बाजारों में बिकने वाली सामान्य वस्तुओं के मूल्य निश्चित किए गए। मूल्य निर्धारण उत्पादन के आधार पर हुआ। मूल्यों पर नियंत्रण रखने और उनका उल्लंघन करने वालों को दण्ड देने के लिए वाणिज्य मंत्री याकूब नजीर को विस्तृत अधिकार दिए गए। याकूब की कड़ाई से मूल्य वृद्धि और बेईमानी पर रोक लग गई। इसके बाबजूद जो व्यापारी बेईमानी करते थे उनका पता लगा कर उन्हें कठोर दण्ड दिया जाता था। यहाँ तक कि कम तौलने वालों के शरीर से कम तौल के दुगुने भार का मांस वाणिज्य मंत्री कटवा लेता था। इन कठोर कार्रवाइयों से मूल्य निश्चित हो गए और बेईमानी समाप्त हो गई।

अलाउद्दीन का बाजार एवं मूल्य–नियंत्रण इस बात को लेकर महत्वपूर्ण नहीं है कि इससे वस्तुएँ सस्ती हो गई बल्कि इस बात से है कि बाजार में वस्तुओं की कीमतें निश्चित हो गई। यद्यपि अलाउद्दीन की आर्थिक व्यवस्था उसके साथ ही समाप्त हो गई, तथापि इससे इनका महत्व कम नहीं हो जाता है। इस व्यवस्था से सबसे अधिक लाभान्वित सैनिक–वर्ग ही हुआ।

2.6 तुगलक वंश (1320–1414)

खिलजियों के बाद दिल्ली सल्तनत के स्वामी तुगलक– शासक बने। तुगलकों ने सबसे अधिक समय तक राज्य किया (1320–1414 ई.) इस वंश के प्रमुख शासक गयासुद्दीन तुगलक, मुहम्मद तुगलक और फिरोज तुगलक थे। तुगलकों ने जहाँ एक तरफ सैनिक विजयों द्वारा साम्राज्य सीमा का विस्तार किया, वहीं प्रशासनिक सुधारों पर भी ध्यान दिया। उनके समय में सल्तनत कीशक्ति एवं समृद्धि में वृद्धि हुई परन्तु इसके साथ ही सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया भी आरम्भ हो गई। तुगलक वंश का संस्थापक गाजी मलिक या गाजी गयासुद्दीन तुगलक था। वह श्करौनाश तुर्क शाखा का था। तुगलक उसकी उपाधि थी।

2.7 मुहम्मद बिन तुगलक (1325–1351)

मुहम्मद बिन तुगलक, गयासुद्दीन तुगलक का ज्येष्ठ पुत्र था। उसका मूल नाम जूना खाँ या जौना खाँ था। उसके पिता ने जूना खाँ की शिक्षा की समुचित व्यवस्था की। वह सैनिक और बौद्धिक गुणों से परिपूर्ण था। गयासुद्दीन तुगलक के शासन काल में जूना खाँ का प्रभाव और शक्ति और अधिक बढ़ गई। उसे उलुग खाँ की उपाधि से विभूषित किया गया। सुल्तान ने उसे युवराज और अपने उत्तराधिकारी के रूप में भी प्रतिष्ठित किया। गयासुद्दीन के शासक काल में उसने दक्षिणी सैनिक अभियानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उसने वारंगल पर अधिकार कर उसे दिल्ली साम्राज्य का भाग बना लिया। उसने निकटवर्ती दुर्गो पर भी अधिकार किया। जाजनगर पर भी उसने विजय प्राप्त की। जब गयासुद्दीन बंगाल पर आक्रमण करने गया तो उसने उलुग खाँ को ही दिल्ली का प्रशासन सौंपा। इससे

उसकी शक्ति और महत्वाकांक्षा और अधिक बढ़ गई। उसने स्वयं गद्दी पर अधिकार करने की योजना बनाई। उसने दिल्ली के बाहर एक लकड़ी का महल बनवाया और अपने पिता का स्वागत इसी महल में किया जब वह तिरहुत की विजय के बाद वापस लौट रहा था। दैवी प्रकोप से या षड्यंत्रवश यह महल गिर गया। इसी में दबकर गयासुद्दीन की मृत्यु हो गई। अतः जूना खाँ (उलुग खाँ) विर्विरोध मुहम्मद तुगलक के नाम से मार्च 1325 ई में दिल्ली का सुल्तान बन बैठा।

मुहम्मद बिन तुगलक की नवीन योजनाएँ

मुहम्मद एक विलक्षण प्रतिभा का शासक था। वह जनहित एवं राज्य की समृद्धि के लिए सदैव नई योजनाएँ बनाता रहता था। इतिहासकार बरनी नेसुलतान की पाँच योजनाओं का उल्लेख किया है दोआब में राजस्व की वृद्धि, देवगिरि को राजधानी बनाना, सांकेतिक मुद्रा जारी करना, खुरासानकृआक्रमण की योजना तथा कराचिल अभियान। यद्यपि सुल्तान ने निष्ठापूर्वक इन योजनाओं पर अमल किया, परन्तु ये सारी योजनाएँ अनेक कारणों से विफल हो गई, तथापि इससे इन योजनाओं का महत्व कम नहीं हो जाता।

2.7.1 राजधानी का परिवर्तन (1326)

गद्दी पर बैठने के पश्चात् सुल्तान ने दिल्ली के स्थान पर दौलताबाद (देवगिरि) को राजधानी बनाने का निश्चय किया। दौलताबाद को राजधानी बनाने के अनेक कारण थे। दौलताबाद साम्राज्य के केन्द्र में स्थित था। उत्तरदृपश्चिम सीमा से दूर होने के कारण दिल्ली जैसा इस पर मंगोलों के आक्रमण का भी भय नहीं था। इबनेबतूता का कहना है कि सुलतान दिल्ली के निवासियों से क्रुद्ध था क्योंकि वे उसे गालियों से भरा हुआ पत्र प्रतिदिन लिखते थे। इसलिए क्रोध में सुल्तान ने दिल्ली को उजाड़ने का निश्चय किया। वस्तुतः मुहम्मद तुगलक राजधानी परिवर्तन के द्वारा दक्षिण पर प्रभावशाली प्रशासनिक नियंत्रण स्थापित करना चाहता था। 1326 ई. में दिल्ली वासियों को दौलताबाद जाने का आदेश हुआ। दौलताबाद पहुँचने के पूर्व मार्ग में ही अनेक व्यक्ति मर गए। दौलताबाद पहुँचकर सुल्तान ने देखा कि दक्षिण से पूरे साम्राज्य पर नियंत्रण करना ज्यादा कठिन था, अतः वह पुनः वापस दिल्ली लौट गया। इस क्रम में दिल्ली का वैभव एवं गौरव क्षतिग्रस्त हो गया। यद्यपि यह योजना विफल हो गई परन्तु इसके परिणामस्वरूप भारत में आगे राजनीतिक एवं सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया बढ़ी। इसका तात्कालिक परिणाम सुल्तान की अलोकप्रियता एवं उसके विरुद्ध बढ़ता अनाक्रोश था। दूसरा दूरगामी परिणाम यह था कि दक्षिण में मुस्लिम संस्कृति का विकास हुआ जिसने अन्ततः बहमनी राज्य के उदय का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

2.7.2 सांकेतिक मुद्रा का चलाना (1329–30)

सांकेतिक मुद्रा चलाने के अनेक कारण थे। राजकोष में बहुमूल्य धातुओं– सोना, चाँदी की कमी हो गयी थी। दूसरा यह कि 14 वीं शताब्दी में सम्पूर्ण विश्व में चाँदी की कमी हो गई थी। मुहम्मद तुगलक ने इस कठिनाई से निबटने के लिए चीन एवं ईरान में प्रचलित सांकेतिक मुद्रा के आधार पर भारत में भी सांकेतिक मुद्रा चलाई। बरनी का मानना है कि सुल्तान को अपने सैनिक अभियानों के लिए अधिक सेना गठित करने के लिए धन की

जरूरत थी। साथ ही सुल्तान की उदारता और अपव्यवता से खजाना खाली था। अतः सांकेतिक मुद्रा चलाना पड़ा।

जिनका ने एक इस योजना के अनुसार सुल्तान ने काँसे के सिक्के चलवाए, मूल्य चाँदी के एक टंका के बराबर होता था। 1329–30 ई. में सुल्तान अध्यादेश द्वारा इन सिक्कों को जारी किया। सभी को इन्हें स्वीकार करने को कहा गया। सुलतान ने इस प्रयोग द्वारा राजकोष में चाँदी को सुरक्षित रखने की व्यवस्था की परन्तु यह योजना भी असफल हो गई। इसका कारण यह था कि लोगों ने चाँदी के टंकों को सुरक्षित कर लिया एवं काँसे के सिक्के के रूप में ही लगान इत्यादि चुकाने लगे। सिक्का ढ़लवाने पर राज्य का नियंत्रण नहीं रहने से अनेक जाली टकसाल बन गए। फलतः सर्वत्र काँसे के सिक्के ही नजर आने लगे। लगान जाली सिक्कों में चुकाई जाने लगी। विदेशी व्यापारियों ने भारत में माल लाना बन्द कर दिया जिससे आयात में भारी कमी आई और व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इससे भारी अर्थ व्यवस्था ठप्प हो गई। बाध्य होकर सुल्तान ने इसे बन्द करने का निश्चय किया। काँसे के सिक्कों को राजकोष में वापस जमा कर लिया गया एवं उनके बदले सोने–चाँदी के सिक्कें दे दिए गए। सुलतान की यह नीति और अधिक घातक सिद्ध हुई।

2.7.3 दोआब में कर वृद्धि (1330)

आर्थिक संकट की स्थिति टालने के उद्देश्य से सुलतान ने दोआब में कर वृद्धि की योजना बनाई। प्रचलित लगान में 1 ⁄ 10 से 1 ⁄ 20 तक की वृद्धि की गई। इसके अतिरिक्त अनेक नए कर (आबवाब) भी दोआब में लगाए गए। राजस्व अधिकारियों को आदेश दिए गए कि इन करों को कड़ाई से वसूले। लगान अधिकारी कड़ाई से लगान वसूलते रहे। इस स्थिति ने विस्फोटक वातावरण तैयार कर दिया। किसानों ने खड़ी फसलों को आग लगा दी, खेती करना छोड़ दिया, सरकारी अनाज लूट लिया एवं राजस्व पदाधिकारियों एवं सैनिकों की हत्या कर दी। अनेक किसान अपनी भूमि छोड़कर जंगल चले गए। बाद में सुल्तान ने किसानों की सहायता के अनेक उपाय किये लेकिन तब काफी विलम्ब हो गया था और कृषि नष्ट हो गई थी।

2.7.4 ईरान और चीन पर अभियान की योजना

सुल्तान, ईरान को जीतना चाहता था। इसलिए वह एक विशाल सेना संगठित की जिसमें 3,70,000 घुड़ सेना थी, जिसे एक वर्ष का वेतन अग्रिम रूप में दिया लेकिन कुछ कठिनाईयों के कारण वह उसे जारी न रख सका और सेना असंगठित हो गई और अपने ही देश को लूटना प्रारम्भ कर दी। इसके पश्चात् वह चीन को जीतने के उद्देश्य से 1,00000 लोगों को भेजा जिसमें से अधिकतर लोग तो हिमालय के बर्फ में मर गये और कुछ जो वचकर वापस हुए उन्हें सुल्तान ने मौत के घाट उतार दिया। इस अभियान में सुल्तान केवल कांगड़ा को जीतने में सफल हुआ।

2.7.5 कृषि के विस्तार की योजना

कृषि के विस्तार के उद्देश्य से सुल्तान ने एक नया विभाग दीवान–ए–कोही स्थापित किया जिसका प्रधान अमीर–ए–कोही था। उसकेअधीन कृषि विभाग रखा गया। जिसका उद्देश्य

कृषि योग्य भूमि का विस्तार करना था। परन्तु अनेक कारणों से यह योजना भी असफल हुई।

इस प्रकार सुल्तान की सभी योजनाएँ विफल हो गई जिसके लिए स्वयं सुल्तान की लापरवाही उत्तरदायी थी।

2.8 फीरोजह तुगलक (1351–1388)

गयासुद्दीन तुगलक और मलिक रजब परम्पर भाई थे। फीरोजशाह तुगलक, मलिक रजब का पुत्र था। मलिक रजब की मृत्यु के पश्चात् गयासुद्दीन तुगलक ने फीरोज की देख भाल की। मुहम्मद तुगलक (गयासुद्दीन तुगलक का पुत्र) ने भी इसका विशेष ध्यान रखा। उसे अमीर–ए–हाजिब के पद पर नियुक्त किया गया। इस पर रहते हुए उसने सुल्तान मुहम्मद तुगलक की सेवा कर उसका विश्वास प्राप्त कर लिया। मुहम्मद तुगलक की मृत्यु के पश्चात् अमीर और उलेमा वर्ग दोनों के सहयोग और समर्थन से फीरोजशाह तुगलक दिल्ली की गद्दी पर बैठा।

2.8.1 प्रशासनिक सुधार

फीरोजशाह तुगलक ने सर्वप्रथम राज्य में शान्ति व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया। उसके प्रशासन का मुख्य उद्देश्य अपनी स्थिति सुदृढ़ करना एवं जनता को सन्तुष्ट रखना था। इसके लिए उसने निम्नलिखित कदम उठाए–

1. सबसे पहले जिन व्यक्तियों के कर्ज सरकार पर थे, उन्हें धन देकर उनसे माफीनामे लिखवाए गए एवं उन्हें दिवंगत सुल्तान की कब्र में दफना दिया गया, जिससे कि सुल्तान की आत्मा को शान्ति मिले। जिन पर राज्य का कर्ज था, उसे माफ कर दिया गया। ऋण सम्बन्धी सभी पंजिकाएं नष्ट कर दी गई।

2. अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए उसने खलीफा से नियुक्ति पत्र प्राप्त किया एवं अपने आपको खलीफा का प्रतिनिधि घोषित किया।

3. राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर योग्य एवं विश्वासपात्र व्यक्तियों को नियुक्त किया गया।

4. दण्डविधान की कठोरता समाप्त कर दी गई तथा जनता पर करों का बोझ हलका कर दिया गया।

5. सरकारी पदों को वंशानुगत कर दिया गया।

6. फीरोजशाह ने शुक्रवार को पढ़े जाने वाले नमाज में, अपने पूर्ववर्ती सुल्तानों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए, नामों का उल्लेख करने की आज्ञा दी।

7.अमीरों की जागीरें, पेंशन एवं सुविधाएं बढ़ा दी गई।

8. शासन, राजनीति एवं धर्म तथा कानून में उलेमा का वर्चस्व पुनः स्थापित किया।

2.8.2 धार्मिक नीति

फीरोजशाह तुगलक के समय में राज्य की धार्मिक नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ।

1. फीरोजशाह तुगलक अपने आपको सिर्फ कट्टर सुन्नी मुसलमानों का ही शासक मानता था। वह इस्लाम के नियमों का कड़ाई से पालन करता था। गैर–सुन्नियों, शियाओं, सूफियों एवं हिन्दुओं के प्रति उसने कठोर एवं अनुदार नीति अपनाई।

2. सुल्तान ने शियाओं पर अनेक अत्याचार किए। उनकी धार्मिक पुस्तकें जला दी गई और धार्मिक प्रथाएँ बन्द करवा दी गई। मुस्लिम स्त्रियों पर परदा कड़ाई से थोपा गया। उन्हें मजारों एवं दरगाहों पर भी जाने की अनुमति नहीं दी गई। हिन्दुओं को जिम्मी की संज्ञा दी गई। अब ब्राह्मणों को भी जजिया देने को बाध्य किया गया। हिन्दुओं के अनेक मन्दिर नष्टकर दिए गए, मन्दिरों की मरम्मत पर पाबंदी लगा दी गई। हिन्दुओं के मेले–त्यौहारों पर भी रोक लगा दी गई। सुल्तान ने धार्मिक भावना से प्रेरित होकर अपने महल के सभी भित्ति चित्र नष्ट करवा दिए। सोने–चाँदी के बर्तन गलवा दिए तथा रेशमी और जरी के वस्त्रों के उपयोग पर रोक लगा दी।

3.शरीयत के नियमों के अनुसार सैनिकों को लूट के 1/5 भाग के स्थानपर 4 / 5 भाग देन का आदेश दिया गया।

4. फीरोज ने अनेक चुंगी कर समाप्त कर दिए।

5. सुल्तान की धार्मिक असहिष्णुता की नीति से उलेमा सन्तुष्ट हुए, परन्तु राज्य पर सुल्तान की धार्मिक नीतियों का विनाशकारी प्रभाव पड़ा।

2.8.3 परोपकार के कार्य

दयालु प्रवृत्ति का होने के कारण फीरोजशाह तुगलक ने जनकल्याण के लिए भी अनेक कार्य किए।

1. बेरोजगार व्यक्तियों को काम देने के लिए दिल्ली में एक रोजगार दफ्तर खुलवाया गया। सारे बेरोजगारों को इस दफ्तर में पंजीकृत किया गया तथा आवश्यकतानुसार उन्हें रोजगार उपलब्ध कराए गए।

2. गरीब और असहाय मुसलमानों की सहायता के लिए उन्हें सुलतान के दास के रूप में रखा गया। उनके लिए समुचित धन की व्यवस्था की गई तथा देख भाल के लिए पदाधिकारी नियुक्त किए गए।

3. फीरोजशाह के समय में इन दासों की संख्या करीब 1,80,000 थी, जिसमें 40,000 सिर्फ सुल्तान की सेवा के लिए ही थे। दासों को नकद या भूमि के रूप में वेतन देने की व्यवस्था की गयी। उनका वेतन दस से सौ टंके था।

4. असहायों की सहायता के लिए सुल्तान का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य दीवान–ए–खैरात की स्थापना करना था। इस विभाग द्वारा अनाथों, विधवाओं और गरीबों के भरण–पोषण एवं उनकी देख भाल का कार्य किया जाता था। अनेक गरीब मुसलमान लड़कियों का विवाह इस विभाग ने करवाया।

5. रोगियों की चिकित्सा के लिए दिल्ली में दार–उल–शफा अथवा खैराती दवाखाना खोला गया जहाँ रोगियों के निःशुल्क चिकित्सा एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था की गई।

2.8.4 फीरोज के निर्माण कार्य

फीरोज शाह तुगलक की ख्याति एक महान निर्माता के रूप में है। उसने अनेक नए भवनों का निर्माण करवाया एवं पुराने भवनों का जीर्णोद्वार किया। इतिहासकार फरिश्ता के अनुसार फीरोज तुगलक ने चार मस्जिदों, तीस महलों, दो सौ काफिला सरायों, पाँच अस्पतालों, सौ कब्रों, दस स्नानागारों, दस समाधियों और सौ पुलों का निर्माण करवाया। उसने अनेक नगर भी बसाए एवं मदरसों की स्थापना की। फतुहात में सुलतान स्वयं उन भवनों का उल्लेख करता है जिसकी सरम्मत उसने करवाई। इनमें प्रमुख थे कुतुबमीनार, शम्सी तालाब, जहाँपनाह, इल्तुतमिश, जलालुद्दीन, अलाउद्दीन आदि सुलतानों के मकबरे एवं शेख निजामुद्दीन औलिया का मकबरा। उसने जामा मस्जिद और मदरसे फीरोज शाही का भी निर्माण करवाया। अनेक खानकाह भी बनाए गए। फीरोज ने अनेक नगरों का भी निर्माण करवाया। इनमें प्रमुख फीरोज शाह कोटला, जौनपुर इत्यादि थे। फीरोज की दिलचस्पी ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में भी थी। उसने श्तास घड़ियाल अथवा जल घड़ी का आविष्कार किया। उसने अशोक की दो लाटें (प्रस्तर स्तम्भ) भी खोजी जो दिल्ली के निकट और मेरठ के पास थी। इन्हें बहुत परिश्रम और कुशलता से दिल्ली में ला कर स्थापित किया गया।

2.9 सैय्यद वंश

दिल्ली में तुगलक वंश की सत्ता की समाप्ति के पश्चात् सैय्यद वंश का शासन आरम्भ हुआ। तुगलक वंश के अन्तिम सुल्तान महमूद की मृत्यु के पश्चात् दिल्ली का सिंहासन खाली हो गया। गद्दी पर अधिकार करने के लिए अमीरों में संघर्ष हुआ जिसमें खिज खाँ विजयी हुआ। उसने दिल्ली पर अधिकार कर एक नए वंश की नींव डाली। यही राजवंश सैय्यद वंश के नाम से विख्यात हुआ। सैय्यदों ने सिर्फ 37 वर्षो (1414–1451 ई.) तक ही राज्य किया। सैय्यद अपने आपको इस्लाम धर्म के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद का वंशज मानते थे। भारत में सैय्यद वंश की सत्ता का संस्थापक खिज खाँ अपना सीधा सम्बन्ध पैगम्बर से जोड़ता है परन्तु इसके लिए स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है। सल्तनत के अधीन सैय्यदों ने अपने लिए महत्वपूर्ण स्थान बना लिया।

सैय्यद वंश के सुल्तानों में खिज खाँ (1414–21), मुबारकशाह (1421–1434), मुहम्मदशाह (1434–1443) और अलाउद्दीन आलमशाह ने शासन किया।

खिज्र खाँ से फीरोजशाह अधिक प्रभावित था। अतः, खिज खाँ के पिता की मृत्यु के पश्चात् फीरोजशाह ने उसे मुलतान की सूबेदारी सौंपी। खिज खाँ बहुत दिनों तक अपने पद पर नहीं रह सका। लाहौर और दीपालपुर के राज्यपाल सारंग खाँ से मतभेद और संघर्ष होने के कारण खिज खाँ को अपना पद छोड़ना पड़ा। उसे मेवात में शरण लेनी पड़ी। जब तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया तो संभवतः खिज खाँ ने उसकी सहायता की और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। इससे प्रसन्न होकर भारत से वापस जाते समय तैमूर ने खिज खाँ को मुलतान और दीपालपुर की सूबेदारी सौंप दी। 1414 ई. में खिज खाँ दिल्ली का

सुल्तान बन बैठा। खिज खाँ ने सुल्तान बनने के बादां भी सुल्तान की उपाधि धारण नहीं की। वह स्वयं को रैयत–ए–आला कहता था। सुल्तान बनने के बावजूद सैद्धान्तिक रूप से वह अपने आपको तैमूर काप्रतिनिधि मानता था। खुतबा में तैमूर के उत्तराधिकारी शाहरूख का नाम पढ़ा जाता था।

खिज्र खाँ के बाद मुबारकशाह (1421–1434) (खिज्र खाँ का पुत्र) दिल्ली का सुल्तान बना। मुबारकशाह ने खिज्र खाँ जैसा रैयत–ए–आला की की उपाधि से सन्तुष्ट नहीं था। इसलिए उसने अपने आपको सुलतान घोषित किया। उसने अपने नाम के खुतबे पढ़वाए।

वह सैय्यद वंश का सबसे महान शासक था। उसके समय में अनेक विद्रोह हुए जिसका सामना उसने वीरतापूर्वक किया। उसका अधिकांश समय सैनिक अभियानों में ही व्यतीत हुआ तथापि विद्रोहों पर स्थायी रूप से नियंत्रण स्थापित नहीं किया जा सका। मुबारक शाह को प्रशासन की ओर ध्यान देने का अवसर नहीं मिल सका। और न ही इसकी सीमा को उसने संकुचित होने दिया। मुबारकशाह ने कला और साहित्य के विकास को भी प्रश्रय दिया। उसने 1433 ई. में मुबारकशाह नामक एक नए नगर की नींव डाली और इसने अन्तर्गत भवनों के निर्माण का आदेश दिया।

मुहम्मद शाह (1434–1443)

मुबारकशाह की हत्या के पश्चात् 1434 ई. को मुहम्मदशाह वजीर एवं अन्य प्रभावशाली अमीरों के समर्थन के साथ दिल्ली की गद्दी पर आरुढ़ हुआ। परन्तु शासन पर वास्तविक नियंत्रण वजीर सरवरुलमुल्क का ही बना रहा। बाद में वजीर का पद कमालुलमुल्क को सौंपा गया। मुहम्मदशाह एक दुर्बल शासक सिद्ध हुआ। उसके समय में सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया और अधिक तीव्र हो गई।

अलाउद्दीन आलम शाह (1443–1476)

मुहम्मदशाह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र अलाउद्दीन आलमशाह सुल्तान बना। वह सैय्यद वंश का अन्तिम शासक था। इस समय तक राज्य की स्थिति और अधिक बिगड़ चुकी थी। महत्वाकांक्षी अमीर स्वतन्त्र होने का प्रयास कर रहे थे। राज्य में जगह–जगह विद्रोह हो रहे थे। प्रशासन पर वजीर नियन्त्रण बढ़ता जा रहा था। स्थिति वस्तुतः नियन्त्रण के बाहर थी। नए सुल्तान में इतनी योग्यता नहीं थी कि वह विघटनकारी तत्त्वों का दृढ़ता से सामना कर सके। फलतः उसके साथ ही सैय्यदों की सत्ता भी समाप्त हो गई। वहलोल ने दिल्ली आकर प्रशासन पर अधिकार कर लिया। अलाउद्दीनशाह ने बहलोल से कहा कि वह बदायूँ के परगने से ही सन्तुष्ट है और दिल्ली का राज्य बहलोल को दे रहा है। दिल्ली में वहलोल ने 1451 ई. में लोदी वंश की नींव डाली।

2.10 लोदी वंश (1451–1526)

सैय्यदों का स्थान अब लोदियों ने ले लिया। बहलोल लोदी ने प्रथम अफगान राज्य की स्थापना की। लोदियों के उदय के साथ ही दिल्ली सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया पूरी हो गयी। लोदियों का स्थान मुगलों ने लिया। बहलोल लोदी (1451–88) के अधिकांश सैनिक अभियान विद्रोहों के दमन के लिए किए गए थे, राज्य विस्तार के लिए नहीं, तथापि

बहलोल ने कुछ सैनिक अभियान विजय प्राप्ति के उद्देश्य से भी किए। सर्वप्रथम, वह दिल्ली के आस–पास के क्षेत्रों को जीत लिया। उसने शक्तिशाली राज्य जौनपुर को जीता। उसका उत्तराधिकारी सिकन्दर लोदी हुआ।

सिकन्दर लोदी (1488–1517)

पिता की ही तरह सिकन्दर लोदी एक योग्य और शक्तिशाली शासक था। उसने बिहार और तिरहुत को जीत लिया। उसने अपनी राजधानी दिल्ली से आगरा स्थानान्तरित की। आगरा के समीप सिकन्दरा नगर का नाम उसके नाम पर ही पड़ा। लोदी वंश का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक था। उसका प्रशासन बहुत प्रभावशाली था। उसके शासन काल में शान्ति एवं समृद्धि था और अनाज सस्ता था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्रइब्राहिमलोदी हुआ।

इब्राहिम लोदी रू (1517–1526)

लोदी वंश का अन्तिम शासक इब्राहिम लोदी हुआ। वह बहुत निर्दयी और खराब स्वभाव का था। वह प्रायः पठान सामन्तों को अपमानित करता था। इसी कारण उसके कुछ सम्बन्धी उसके विपरीत हो गये। उसके शासन काल में अनेक विद्रोह हुए। अन्त में पंजाब का राज्यपाल दौलत खाँ लोदी ने काबुल के शासक बाबर को भारत पर आक्रमण करने के लिए आमन्त्रित किया। बाबर ने प्रसन्नतापूर्वक आमन्त्रण स्वीकार किया और 1526 ई. में पानीपत के मैदान में इब्राहिम लोदी की मृत्यु के साथ ही दिल्ली सल्तनत का अन्त हो गया और मुगल वंश का शासन प्रारम्भ हुआ।

2.11 बहमनी साम्राज्य

बहमनी सामाज्य की स्थापना मुहम्मद बिन तुगलक के समय दक्षिण भारत में 1346 ई. में हसन गंगू या जफर खाँ ने की थी। उसने अलाउद्दीन हसन बहमनशाह की उपाधि धारण की।

2.11.1 अलाउद्दीन हसन बहमन (1346–1358)

अपनी सैनिक एवं प्रशासनिक क्षमता के आधार पर उसने नवगठित राज्य की स्थिति सुदृढ़ की। तुगलकों की सेना को परास्त कर उसने कंधार, कोट्टगिरि, कल्याण एवं बीदर पर भी अपना आधिपत्य स्थापित किया। उसने गुलबर्गा के विद्रोह का दमन किया उसकी सैनिक विजयों ने बहमनी राज्य की स्थिति सुदृढ़ कर दी। उसने अपनी प्रजा के साथ उदारतापूर्वक व्यवहार किया। हिन्दुओं पर से जजिया वापस ले लिया गया।

2.11.2मुहम्मद शाह प्रथम (1358–1375)

अलाउद्दीन के पश्चात् उसका पुत्र मुहम्मद शाह प्रथम 1358 ई. में सुल्तान बना। उसके शासन का अधिकांश समय तेलंगाना के शासक कपायनायक एवं उसके पुत्र विनायक देव तथा विजयनगर साम्राज्य से युद्ध करने में व्यतीत हुआ। तेलंगाना पर आक्रमण कर उसने गोलकुण्डा छीन लिया। विजय नगर के राजा बुक्का को भी उसने परास्त किया। सम्पूर्ण बहमनी राज्य चार दौलताबाद, बरार, तराफों या अतराफों अथवा सूबों में विभक्त किया गया

बीदर और गुलवर्गा। इसी समय बारुद का प्रयोग आरम्भ हुआ, जिसने बहमनियों की सैनिक क्षमता और अधिक बढ़ा दी।

2.11.3ताजुद्दीन फीरोजरू (1397–1422)

1375 ई. में मुहम्मद प्रथम की मृत्यु से 1397 ई. में ताजुद्दीन फीरोज के गद्दी पर बैठने के बीच चार सुल्तानों ने शासन किया। इस अवधि में राज्य की शक्ति निर्बल पड़ने लगी। दक्षिण में विदेशियों (अफाकियों) और उत्तर से दक्षिण भारत आने वाले दक्खिनियों (घरीबों) के मध्य अपना–अपना प्रभाव जमाने के लिए संघर्ष चलता रहा। गद्दी पर बैठते ही ताजुद्दीन ने इस संघर्ष से उबरने का प्रयास किया। अफाकियों और घरीबों की दलगत राजनीति से ऊबकर उसने हिन्दुओं को प्रश्रय देना आरम्भ किया। कला एवं साहित्य को उसने संरक्षण दिया। तेलंगाना पर भी उसने आक्रमण किया। राजनीतिक षड्यंत्रों एवं कुचक्रों के कारण उसके अन्तिम दिन कष्ट में व्यतीत हुए।

2.11.4अहमद शाह प्रथम (1422–1436)

1422 ई. में अहमदशाह प्रथम बहमनी साम्राज्य का सुल्तान बना। उसने सबसे पहले साम्राज्य की राजधानी गुलबर्गा से बीदर स्थानांतरित कर दी। बीदर का नाम बदल कर मुहम्मदाबाद रख दिया गया।

2.12.1 संगम वंश

संगम वंश के शासकों में हरिहर प्रथम (1336–1356), बुक्का (1356–1377), हरिहर द्वितीय (1377–1404 तथा 1404 से 1430 ई. के मध्य तीन राजाओं–देवराय प्रथम, वीर विजय एवं रामचन्द्र ने राज्य किया। संगमवंशका अन्तिम महान शासक देवराय द्वितीय (1430–1446) था। उसने आन्ध्र में कोंडविदु का दमन किया तथा कृष्णा नदी तक अपने राज्य की पूर्वी सीमा का विस्तार किया। वेलम का शासक भी उसके द्वारा पराजित हुआ। उसके समय में राज्य की आर्थिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि बढ़ी। उसी के समय में फारस का राजदूत अब्दुर्रज्जाक विजयनगर आया था। उसने देवराय एवं विजयनगर की प्रशंसा की है। 1446 से 1485 ई. के मध्य तक जितने भी शासक हुए वे निर्बल. साबित हुए। विरुपाक्ष की हत्या कर सालुव नरसिंह ने नए राजवंश सालुव वंश की नींव रखी।

2.12.2 सालुव वंश

सालुव वंश के शासकों में नरसिंह (1485–1490), इम्माड़ि नरसिंह (1490–1505) शासक रहे। इम्माड़ि नरसिंह इस वंश का अन्तिम शासक था। उसका संरक्षक नरसिंह का सेनापति नरसानायक बना। 1505 ई. में नरसानायक के पुत्र वीर नरसिंह ने राजा इम्माड़ि नरसिंह की हत्या कर स्वयं सत्ता हथिया ली। सालुव वंश की जगह अब तुलुव वंश का शासन आरम्भ हुआ।

2.12.3 तुलुव वंश

तुलुव वंश की स्थापना वीर नरसिंह (1505–1509) ने की थी। 1509 ई. में उसकी मृत्यु के पश्चात् विजयनगर साम्राज्य का श्रेष्ठतम शासक कृष्णदेव राय (1509–1529) गद्दी पर बैठा।

वह एक महान सेना नायक, प्रशासक तथा कला–कौशल, धर्म, शिक्षा एवं साहित्य का संरक्षक था। उसने पुर्तगालियों से मित्रवत सम्बन्ध स्थापित किए। उसका राज्य पश्चिम में कोंकण, पूर्व में विजगापट्टम और कटक, दक्षिण में कन्याकुमारी तथा उत्तर में बीदर तक विस्तृत था।

कृष्णदेव राय की गणना दक्षिण भारत के श्रेष्ठतम शासकों में की जाती है। सैनिक अभियानों के अतिरिक्त उसने प्रशासनिक सुधारों की ओर भी ध्यानदिया। तेलगु ग्रन्थ आमुक्तमाल्याद उसकी उपलब्धियों पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। उसका शासन तेलगु–साहित्य का शास्त्रीय युग माना जाता है। उसके दरबार की शोभा श्अष्ट दिग्गजश बढ़ाते थे। पुर्तगाली यात्री पेईज कृष्णदेव राय के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की प्रशंसा करता है। 1529 ई. में इस महान राजा की मृत्यु हो गई। उसके साथ ही साम्राज्य के बुरे दिन पुनः आ गए।

कृष्णदेव राय के पश्चात् अच्युतदेव राय (1529–1542), सदाशिव राय (1542–1570) शासक हुए। सदाशिव राय तुलुन वंश का अन्तिम शासक था। इसके काल में राज्य का वास्तविक मालिक रामराय बन बैठा। 23 जनवरी, 1565 ई. को राक्षसी–तंगड़ी (तालीकोटा) के युद्ध में विजयनगर की बुरी तरह पराजय हुई। रामराय युद्ध में मारा गया। सदाशिव ने पेनुकोंडा से अपना शासन आरम्भ किया। 1570 ई. में तिरुमल ने सदाशिव को पदच्युत कर अंडविदु राजवंश की नींव डाली। इस राजवंश के शासकों ने 1615 ई. तक राज्य किया। रंग तृतीय के समय में इस राज्य की बची–खुंची शक्ति भी नष्ट हो गई और इन अवशेषों पर श्रीरंगपट्टम, बेदनुर, मदुरा, तंजौर आदि स्वतन्त्र राज्यों का उदय हुआ।

अफाकियों का प्रभाव बढ़ने लगा। फलतः, दलगत राजनीति पुनः उभरकर सामने आ गई। उसने माहूर के राजा के विद्रोह को शान्त किया तथा मालवा की सेना को भी पराजित किया। गुजरात से भी उसका युद्ध हुआ, परन्तु अन्त में उसे गुजरात से संधि करनी पड़ी।

अहमदशाह द्वितीय की मृत्यु के पश्चात् क्रमशः हुमायूँ और अल्पवयस्क निजामुद्दीन शासक बने। निजामुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् बहमनी साम्राज्य पर महमूद गावाँ का प्रभाव था। मुहम्मदशाह के समय में महमूद गाँवा ही वास्तविक शासक बना रहा। मुहम्मदशाह के बाद क्रमशः महमूदशाह एवं कलीमुल्लाह शासक बने। 1526 ई. में नाम मात्र के सुल्तान की मृत्यु के साथ ही बहमनी

साम्राज्य भी समाप्त हो गया। इसके अवशेषों पर दक्षिण में पाँच स्वतन्त्र राज्यों का उदय हुआ। ये राज्य निम्नलिखित थे बीजापुर, अहमदनगर, बरार, गोलकुण्डा और बीदर।

2.11.5 बहमनी प्रसन

बहमनी साम्राज्य अतरफों (प्रांतों) में विभक्त था। मुहम्मदशाह प्रथम के समय चार अतरफ थे। अतरफ का शासन तर्फदार (प्रांतीय सुबेदार) के द्वारा होता था। तर्फदार अपने प्राप्त में लगान वसूल करता था, सेना का संगठन करता था और अपने प्रान्त के सभी सैनिक असैनिक अधिकारियों की नियुक्ति करता था। अतरफ, सरकारों में, सरकार परगनों में, परगने गाँवों में विभक्ति थे। गाँव प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी।

शासन का प्रधान सुल्तान था जो निरंकुश और स्वेच्छाचारी शासक होता था। वह अपने को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि कहता था। सुलतान की सहायता के लिए मंत्री होते थे। प्रधानमंत्री श्वकील उस– सल्तनत, वित्तमंत्री अमीर–ए–जुमला तथा विदेशमंत्री वजीर–ए–अशरफ कहलाते थे।

राज्य के मुख्य न्यायाधीश को सद्र–ए–जाहर कहा जाता था। वह धार्मिक कार्यो और राज्य के द्वारा दिये जाने वाले दान की भी व्यवस्था करता था।

राज्य के सेनापति को अमीर–उल–उमरा कहा जाता था। सुल्तान के अंग रक्षक को खास खेल कहा जाता था।

2.12 विजयनगर साम्राज्य

दक्षिण भारत में दूसरा प्रभावशाली राज्य विजयनगर का था। इस राज्य की स्थापना मुहम्मद बिन तुगलक के समय में हुई। विजयनगर हिन्दू सभ्यता एवं संस्कृति का केन्द्र था। विजयनगर साम्राज्य की स्थापना हरिहर और बुक्का ने की थी। उनके वंश का नामकरण उनके पिता संगम के नाम पर हुआ। 1336–1565 ई. के संगम वंश (1336–1485), मध्य विजयनगर में तीन राजवंशों ने शासन किया। सालुव वंश (1485–1505) तथा तुलुव वंश (1505–1565)।

2.12.1 विजयनगर प्रशासन

राजा शासन का प्रधान होता था। वह श्रायश कहलाता था। वह राज्य में न्याय, समता, धर्म निरपेक्षता, शान्ति और सुरक्षा की व्यवस्था करता था। युवराज को भी प्रशासन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। कभी–कभी दो राजा साथ–साथ शासन करते थे जैसे–हरिहर और बुक्का, विजय राय एवं देवराय।

राजपरिषद, राजा की सलाहकारी समिति थी। इसका मुख्य कार्य राजा को सलाह देना था। यह राजा के कार्यों पर नियन्त्रण रखती थी। इसका प्रधान महाप्रधानी या प्रधानमंत्री होता था जिसमें राज्य के मंत्री, उपमंत्री तथा विभागीय अध्यक्षों के अतिरिक्त राजा के निकट सम्बन्धी भी होते थे। राजा राजपरिषद की सलाह लेता था लेकिन उसे मानने को बाध्य नहीं था। राजा, युवराज के पश्चात् महाप्रधानी ही शासन का सर्वोच्च पदाधिकारी था।

प्रशासन की सुविधा के दृष्टिकोण से सम्पूर्ण साम्राज्य विभिन्न प्राप्तों (मण्डल) में विभक्त था। प्रान्त, कोट्टम (जिला), कोट्टम नाडु (परगना), नाडु मेलागाम (50 गाँवों का समूह) मेलाग्राम उर या ग्राम में विभक्त थे। प्रत्येक गाँव विभिन्न वार्डो में बंटा हुआ था। सभा गाँव का प्रशासन देखती थी।

आयगार व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक गाँव को एक स्वतन्त्र प्रशासनिक इकाई मान कर उसका गठन किया गया। इसके प्रशासन की जिम्मेदारी बारह व्यक्तियों के समूह अथवा आयगार को सौंपी गयी।

राज्य की आय का मुख्य स्रोत भूमि कर था जो उपज का 1/6 भाग होता था।

2.13 सारांश

इकाई दो में हमने खिलजी वंश के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी, तुगलक वंश के सुल्तान – मुहम्मद बिन तुगलक और फिरोजशाह तुगलक, सैय्यद वंश, लोदी वंश, बहमनी साम्राज्य और विजयनगर साम्राज्य के शासकों के काल की महत्वपूर्ण घटनाओं और उपलब्धियों का उल्लेख किया है।

2.14 सम्भावित उत्तर

खिलजी वंश का संस्थापक जलालुद्दीन खिलजी था।

- अलाउद्दीन के समय दकन की विजय में मलिक काफूर की महत्वपूर्ण भूमिका थी।
- अलाउद्दीन एक निरंकुश शासक था।
- अलाउद्दीनके बाजार एवं मूल्य नियंत्रण का उद्देश्य सैनिकों के साथ जनता को उचित मूल्य पर वस्तुएँ उपलब्ध कराना था।
- मुहम्मद बिन तुगलक ने एक नया विभाग श्दीवान–ए–कोही की स्थापना की।
- फिरोज तुगलक ने ब्राह्मणों को भी जजिया देने को बाध्य किया।
- सैय्यद वंश का संस्थापक खिज खाँ अपने आप को तैमूर का प्रतिनिधिमानता था।
- बहमनी साम्राज्य की स्थापना 1346 ई. में हसन गंगू ने की थी।
- विजय नगर साम्राज्य का सर्वश्रेष्ठ सुल्तान कृष्णदेव राय था।

2.15 सन्दर्भ / अग्र अध्ययन

सन्दर्भ

1. शर्मा, एल.पी. : मध्यकालीन भारत, आगरा.

2. वर्मा, हरिश्चन्द्र :मध्यकालीन भारत भाग–1, दिल्ली.

3. श्रीवास्तव, ए.एल.: दिल्ली सल्तनत

अग्र अध्ययन

1. एन.सी.इ.आर.टी.: मध्यकालीन भारत, नई दिल्ली

इकाई–3

संरचना

3.1 प्रस्तावना

इकाई–3 में हमने मुगल साम्राज्य की स्थापना, बाबर और हुमायूँ के काल की घटनाओं और उपलब्धियों, शेरशाह सूरी और उसके प्रशासनिक सुधार, अकबर का प्रारम्भिक जीवन, प्रशासन, विजयें, धर्म और राजपूत नीति पर विचार व्यक्त किया है।

परिचय

पानीपत के प्रथम युद्ध (1526 ई.) में बाबर ने इब्राहिम लोदी को पराजित कर मुगल साम्राज्य की नींव रखी। बाबर ने मुगल साम्राज्य की स्थापना की, हुमायूँ उसे सुरक्षित बनाये रखा तथा अकबर ने सुदृढ़ आधार प्रदान किया। शेरशाह (1486–1540) ने दुबारा भारत में अफगान राज्य की स्थापना की। दुर्भाग्यवश शेरशाह के उत्तराधिकारी अयोग्य निकले। वे शेरशाह द्वारा स्थापित साम्राज्य की सुरक्षा नहीं कर सके। फलतः, शेरशाह की मृत्यु के बाद मुगलों ने पुनः भारत में अपनी शक्ति स्थापित की तथा अफगानों के भारत पर राज्य करने के स्वप्न को भंग कर दिया। पानीपत के द्वितीय युद्ध ने अफगानों की शक्ति को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया एवं मुगलों की सत्ता भारत में दृढ़तापूर्वक स्थापित हो गयी। जनवरी, 1556 में हूमायूँ की मृत्यु के पश्चात् नवस्थापित मुगल राज्य की बागडोर अल्पवयस्क अकबर के हाथों में आ गई। अकबर (1556–1605) ने अपने पचास वर्षो से अधिक शासन के दौरान मुगल सत्ता की जड़े भारत में गहराई से जमा दीं। अकबर की राजपूत नीति ने उसकी सैनिक शक्ति अत्यन्त सुदृढ़ कर दी एवं लगभग समूचे भारत पर एकछत्र राज्य स्थापित किया।

3.2 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- मुगल साम्राज्य की स्थापना में बाबर की भूमिका से परिचित हो सकेंगे हुमायूँ के काल की घटनाओं से अवगत हो सकेंगे।
- शेरशाह एवं उसके प्रशासनिक सुधारों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- अकबर के प्रारम्भिक जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- अकबर के प्रशासन प्रणाली से अवगत हो सकेंगे।
- अकबर के विजय अभियान से परिचित हो सकेंगे।
- अकबर की धर्म नीति से अवगत हो सकेंगे।
- अकबर की राजपूत नीति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.3बाबर (1526–1530)

भारत में मुगलवंश के संस्थापक का पूरा नाम जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर था। उसका जन्म शुक्रवार 14 फरवरी, 1483 ई. को फरगना (मध्य एशिया के एक छोटे राज्य) में हुआ था। उसके पिता का नाम उमरशेख मिर्जा एवं माता का नाम कुतुलुगनिगार था। बाबर का पिता तैमूर एवं माता चंगेज खाँ के वंशज थे। बाबर चगताई तुर्क था परन्तु उसका वंश मुगलवंश कहा जाता है।

बबर 1494 ई. में फरगना का शासक बना। उसके सामने दो स्पष्ट लक्ष्य थे–अपने राज्य की सुरक्षा एवं विस्तार। फरगना में अपनी स्थिति सुधारने के पश्चात् बाबर ने राज्य विस्तार की तरफ ध्यान दिया। बाबर ने 1504 ई. में काबुल पर अधिकार कर वहाँ का शासक बन बैठा। उसने तैमूरी परम्परा के विरुद्ध पहली बार मिर्जाश की जगह पादशाह (बादशाह) की उपाधिधारण की। काबुल पर विजय प्राप्त करने के साथ ही उसकी आकांक्षा भारत पर चढ़ाई करने की रही लेकिन उसे पहला मौका 1519 ई. में ही मिल पाया। सितम्बर,1519 में बाबर ने दूसरी बार भारत की ओर रुख किया। वह खैबर मार्ग से भारत की तरफ बढ़ा। वह युसुफजाइयों का दमन करना तथा पेशावर को अपनी सैनिक शक्ति का केन्द्र बनाना चाहता था लेकिन बदख्शां में उपद्रव की सूचना पाकर उसे वापस लौटना पड़ा। बाबर का तीसरा आक्रमण 1520 ई. में हुआ। इस बार उसने पुनरू बाजौर तथा भीरा पर विजय प्राप्त की। सियालकोट पर भी उसका आधिपत्य हो गया। लेकिन उसे कांधार में शाहबेग अरगों के उपद्रव की सूचना मिली। फलतः, बाबर को वापस लौटना पड़ा।

इसी समय बाबर को पंजाब के गवर्नर दौलत खाँ लोदी का निमंत्रण भारत पर आक्रमण करने के लिए प्राप्त हुआ। इसे स्वीकार कर बाबर पंजाब की तरफ बढ़ा। उसने लाहौर, दीपालपुर एवं जालंधर पर अधिकार कर लिया। लाहौर में ही बाबर ने पहली बार इब्राहिम की सेना को परास्त किया। बाबर ने युद्ध के पश्चात् आलम खाँ को दीपालपुर दिया तथा दौलत खाँ लोदी को जालंधर, सुल्तानपुर तथा कुछ अन्य क्षेत्र दिए जिससे वह असन्तुष्ट हो उठा। बाबर के जाने के बाद पुनरू दौलत खाँ लोदी अपनी शक्ति बढ़ाने का प्रयास किया और आलम खाँ को भी दीपालपुर से निकाल दिया। आलम खाँ बाबर की शरण में पहुँचा। अतः 1525 ई. में बाबर दौलत खाँ लोदी के विरुद्ध बढ़ा। बाबर की सैनिक शक्ति देखकर दौलत खाँ लोदी को आत्मसमर्पण करना पड़ा। उसे गिरफ्तार कर भीरा भेजा गया परन्तु मार्ग में ही उसकी मृत्यु हो गई।

12 अप्रैल, 1526 ई. को बाबर ने पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहिम लोदी को परास्त कर भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। पानीपत के युद्ध के पश्चात् उसके अधीन पंजाब से आगरा तक का क्षेत्र आ गया। पानीपत के युद्ध में विजय ने बाबर को दिल्ली और आगरा का शासक बना दिया, खानवा के युद्ध ने बाबर के प्रबलतम शत्रु राणा सांगा का अन्त कर बाबर की विजयों को स्थायित्व प्रदान किया। बाबर राणा सांगा का मुकाबला करने के लिए फतेहपुर सिकरी के निकट खाँनवा नामक स्थान पर पहुँचा। रविवार, 16 मार्च, 1527 को खाँनवा के मैदान में दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। राजपूत वीरता सेलड़े परन्तु बाबर के तोपखाना और उसकी श्तुलगुमाश ने राजपूतों के पाँव उखाड़ दिए। राणा सांगा गम्भीर रूप से घायल अवस्था में रणक्षेत्र से निकल भागा। बाद में उसके सामंतों ने विष देकर उसकी हत्या कर दी। बाबर की यह एक महान विजय थी। युद्ध के पश्चात् उसने श्गाजीश की उपाधि धारण की। खाँनवा युद्ध के पश्चात् बाबर चन्देरी की तरफ बढ़ा और चन्देरी का दुर्ग हेर लिया। राजपूत दुर्ग की रक्षा नहीं कर सके। उन्हें पराजित होना

पड़ा। जनवरी, 1528 ई. में बाबर का चन्देरी पर अधिकार हो गया। मेदिनी राय की दो पुत्रियों का विवाह क्रमशः हुमायूँ एवं कामरान से कर दिया गया। चन्देरी युद्ध में विजय के पश्चात् बाबर 6 मई, 1529 ई. को घाघरा के निकट बाबर और अफगानों की मुठभेड़ हुई। अफगान युद्ध में बुरी तरह पराजित हुए। घाघरा का युद्ध भारत में बाबर का अन्तिम युद्ध था।

23 दिसम्बर, 1530 को बाबर ने हुमायूँ को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया। 26 दिसम्बर, 1530 ई. को आगरा में बाबर की मृत्यु हो गई।

3.4 हुमायूँ (1530–1556 ई.)

बाबर की मृत्यु के पश्चात् 30 दिसम्बर, 1530 को हुमायूँ का आगरा में राज्याभिषेक हुआ। हुमायूँ अपने पिता के आदेशानुसार अपने भाईयों में राज्य का बँटवारा किया। उसने हिन्दाल को मेवात की जागीर दी जिसमें अलवड़, गुड़गाँव, मथुरा और आगरा के इलाके सम्मिलित थे। कामरान को काबुल और कांधार तथा अस्करी को संभल की जागीर मिली। अपने भाईयों एवं अमीरों में राज्य और जागीर वितरित करने की नीति का एक घातक परिणाम यह निकला कि उनमें स्वच्छन्दता की भावना बढ़ गई। वे अपना प्रभाव बढाने की चेष्टा करने लगे। साम्राज्य का बंटवारा ही उसके जीवन काल की सबसे बड़ी भूल थी।

हुमायूँ का पहला सैनिक अभियान बुन्देलखण्ड में स्थित कालिंजर के राजा के विरुद्ध हुआ। उस समय कालिंजर का राजा प्रताप रुद्र देव था।

मई–जून, 1531 में हुमायूँ ने कालिंजर का दुर्ग घेर लिया। राजा प्रताप रुद्र देव से सिर्फ अपनी अधीनता स्वीकार करवा कर वह आगरा लौट गया। कालिंजर अभियान व्यर्थ सिद्ध हुआ। अगस्त, 1532 में मुगल और अफगान सेना की मुठभेड़ गोमती नदी के किनारे दौराहा नामक स्थान पर हुआ। इस युद्ध में महमूद लोदी की पराजय हुई। जौनपुर पर हुमायूँ का अधिकार हो गया।

महमूह लोदी को परास्त करने के पश्चात् हुमायूँ बिहार की तरफ बढ़ा। 1532 ई. में उसने चुनार का दुर्ग (पूर्वी भारत का द्वार) घेर लिया परन्तु इस पर अधिकार नहीं कर सका। शेर खाँ भी अभी हुमायूँ से उलझने की स्थिति में नहीं था। 1535 ई. में हुमायूँ ने गुजरात के बादशाह बहादुरशाह को हराया। फिर चम्पानेर पर अधिकार किया। 1537 ई. में बहादुरशाह समुद्र में डूबकर मर गया। फिर हुमायूँ ने बंगाल पर अधिकार किया। चुनार और गौड़ पर हुमायूँ का अधिकार हो गया किन्तु 1539 ई. में शेरशाह ने हुमायूँ को चौसा नामक स्थान पर हराया और फिर 1540 ई. में शेरशाह ने कन्नौज नामक स्थान पर हुमायूँ को हराया। हुमायूँ पहले भागकर दिल्ली गया, फिर सरहिन्द गया, वहाँ से सिन्ध। फिर जोधपुर गया, वहाँ से अमरकोट गया। यहाँ 23 नवम्बर, 1542 ई. को अकबर का जन्म हुआ। वहाँ से काबुल गया। कामरान ने हुमायूँ से धोखा किया। अतः वह कान्धार होकर फारस चला गया। अकबर काबुल में अपने चाचा कामरान के ही पास बन्दी रह गया। वहाँ फारस के शाह के साथ एक सन्धि की और उसकी मदद से हुमायूँ ने फिर मार्च 1545 ई. काबुल और कन्धार को जीत लिया। कामरान को बन्दी बना लिया गया। फरवरी, 1555 ई. में हुमायूँ ने सिकन्दर सूर को परास्त कर दिल्ली विजय किया। 25 जनवरी, 1556 ई. को उसकी मृत्यु हो गई।

3.5 शेरशाह सूरी (1540–1555 ई.)

भारत में द्वितीय अफगान राज्य का संस्थापक शेरशाह था। उसके जीवन एवं उसके कार्यकलापों पर अब्बास शेरवानी की पुस्तक श्तारीख–ए–शेरशाहीसे पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। शेरशाह के बचपन का नाम फरीद था। उसकाजन्म सुल्तान बहलोल लोदी (1450–88) के शासन काल में हुआ था। फरीद के पिता का नाम हसन खाँ एवं पितामह का नाम इब्राहिम खाँ सूर था। इब्राहिम के पूर्वज मूलतः अफगानिस्तान में रोहड़ी (शेरगढ़ी) के निवासी थे। सुलतान बहलोल लोदी ने अफगानों को भारत आने का खुला निमंत्रण दिया। अतः इब्राहिम खाँ सूर अपने पुत्र हसन खाँ के साथ जीविका की खोज में भारत आया।

फरीद ने अरबी और फारसी का अध्ययन किया। सहसाराम की जागीर का बड़ा अच्छा प्रबन्ध किया। पानीपत के युद्ध के बाद शेर खाँ (शेरशाह) दिल्ली में बाबर की सेना में भर्ती हो गया। यहाँ इसने मुगलों के युद्ध करने के तरीके सीखे, इसी ज्ञान पर शेर खाँ ने हुमायूँ को चौसा और कन्नौज में हराया था। बहार खाँ की मृत्यु के बाद उसका लड़का जलाल खाँ बिहार की गदी पर बैठा। वह कम उम्र का होने से शेर खाँ उसका संरक्षक बना। धीरे–धीरे शेर खाँ ने बिहार अपने अधिकार में कर लिया। फिर बंगाल के शासक महमूद खाँ को परास्त किया। इस पर महमूद ने हुमायूँ से मदद की प्रार्थना की। हुमायूँ ने बंगाल विजय किया, किन्तु 1539 ई. में चौसा में और 1540 में कन्नौज में शेर खाँ ने हुमायूँ को हराया और शेरशाह की उपाधि धारण कर दिल्ली की गदी पर बैठा।

विजयें

1. पंजाब विजय और खोखर जाति का दमन।

2. बंगाल का विद्रोह शान्त किया।

3. मालवा, रायसेन और सिन्ध 1542 ई. तक विजय किये।

4. मार्च, 1544 को जोधपुर के राजा मालदेव को धोखे से परास्त कर विजय किया।

5. आबू और मारवाड़ की विजय।

6. चित्तौड़ विजय

7. 1545 ई. में कालिंजर विजय किया। 22 मई, 1545 ई. की शेरशाह को मृत्यु हो गई।

3.5.1 शासन सुधार

भारतीय इतिहास में शेरशाह सिर्फ एक महान विजेता एवं कुशल सेनानायक के रूप में ही विख्यात नहीं है, बल्कि उसकी गणना एक सक्षम प्रशासक के रूप में भी की जाती है। उसने न सिर्फ एक राज्य की स्थापना की, बल्कि एक सशक्त प्रशासनिक व्यवस्था द्वारा इसे स्थायित्व प्रदान करने का भी प्रयास किया। शेरशाह की प्रशासनिक व्यवस्था ने अकबर के सामने एक आदर्श उपस्थित किया। अकबर ने शेरशाह द्वारा निर्देशित मार्ग को ही संशोधनों

एवं परिवर्धनों के साथ अपनाया। तारीख–ए–शेरशाही का लेखक अब्बास खाँ शेरशाह के प्रशासन की प्रशंसा करता है।

शेरशाह के समूचे प्रशासन को सुविधानुसार तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है केन्द्रीय संगठन, प्रांतीय व्यवस्था एवं स्थानीय शासन। इनके अतिरिक्त उसने सैनिक एवं मुद्रा– सम्बन्धी व्यवस्था भी की।

केन्द्रीय संगठन

अफगान राज्य की शक्ति का केन्द्र स्वयं सुल्तान था। वह राजधानी आगरा से शासन करता था। राज्य की सारी शक्तियां उसी के हाथों में केन्द्रित थी। वह कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं सैनिक मामलों का प्रधान था। राज्य की सभी महत्वपूर्ण नियुक्तियां स्वयं शेरशाह द्वारा ही होती थी। उसने एक उदार तानाशाह के समान अपनी शक्ति का उपयोग जनता की भलाई के लिए किया। सिद्धान्ततः उसने अफगानों की राजत्व सम्बन्धी नीतियों को अपनाया परन्तु व्यवहार में वह तुर्क अफगान शासकों की तरह ही शासन करता था।

दीवान–ए–वजारत शेरशाह के समय में प्रमुख प्रशासकीय विभाग थे (अर्थ विभाग), दीवान–ए–आरिज (सैन्य विभाग), दीवान–ए–रसालत (विदेश विभाग), दीवान–ए–इंशा (संचार विभाग), दीवान–ए–कार्यों (न्याय विभाग), दीवान–ए–बरीद (गुप्तचर विभाग)। इन महत्वपूर्ण विभागों के अतिरिक्त केन्द्रीय प्रशासन से सम्बद्ध अन्य किसी प्रमुख पदाधिकारी का उल्लेख नहीं मिलता,परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि सिर्फ इन्हीं व्यक्तियों के बलबूते पर केन्द्रीय प्रशासन नहीं चलता होगा। निश्चित ही कुछ अन्य प्रशासनिक पदाधिकारी रहे होंगे। संभवतः सुल्तान के महल, उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति, सुरक्षा एवं निजी सेवा के लिए पदाधिकारियों का एक संवर्ग रहा होगा, परन्तु उनके विषय में यथेष्ट जानकारी उपलब्ध नहीं है। शेरशाह ने सल्तनंत काल से चली आ रही केन्द्रीय प्रशासनिक व्यवस्था को ही आवश्यक संशोधनों एवं परिवर्तनों के साथ बनाए रखा।

प्रांतीय व्यवस्था

प्रांतीय शासन व्यवस्था के क्षेत्र में पूरे अफगान राज्य में एकरूपता नहीं पाई जाती है। विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यकतानुसार (सरकार / इक्ता) अलग–अलग व्यवस्था स्थापित की गई परन्तु सभी जगह सुल्तान द्वारा कड़ा नियंत्रण बनाए रखा गया। प्रांतीय अधिकारी विभिन्न नामों से जाने जाते थे, जैसे, हाकिम, अमीन, फौजदार इत्यादि। प्रांतपति अपनी सेना एवं अन्य प्रशासनिक कर्मचारियों की मदद से प्रान्त का शासन करता था।

स्थानीय शासन

शेरशाह के समय में प्रान्त क्रमशः सरकार, परगना एवं ग्राम में विभक्त थे। इन प्रशासनिक इकाईयों का शासन प्रबन्ध विभिन्न पदाधिकारियों के जिम्मे सौंपा गया था। प्रान्त या सूबे अनेक सरकारों (जिलों) में विभक्त थे। एक अनुमान के अनुसार शेरशाह के साम्राज्य में 47 सरकार थे। सरकार का प्रशासन दो प्रमुख अधिकारियों शिकदार–एदृशिकदारान एवं मुंसिफ–ए–मुंसिफान के जिम्मे था। इन दोनों में शिकदार–ए–शिकदारान का पद ज्यादा महत्वपूर्ण था। सरकार से छोटी प्रशासनिक इकाई परगना थी। प्रत्येक सरकार अनेक

परगनों में विभक्त था। परगने के प्रशासन के लिए शिकदार, फोतदार, कारकुन एवं अमीन नियुक्त किये जाते थे। परगना का सर्वोच्च पदाधिकारी शिकदार होता था। फोतदार का पद कोषाध्यक्ष के समान था। प्रत्येक परगने में एक फारसी एवं हिन्दी कारकुन (कलक) होते थे। अमीन परगने की समस्त भू–व्यवस्था का नियंत्रक था। सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई ग्राम थी। ग्राम प्रशासन का प्रधान मुखिया होता था। मुखिया अन्य स्थानीय पदाधिकारियों, पटवारी, मुकद्दम एवं चौकीदार की सहायता से अपने–अपने गाँव में शान्ति की स्थापना करता, लगान वसूल करवाता, अपराधों की रोक–थाम करवाता एवं अपराधियों को दण्डित करता था।

सैन्य संगठन

शेरशाह ने एक स्थायी और विशाल सेना का संगठन किया। फौजदार एवं किलेदार नियुक्त किये। पुराने किलों की मरम्मत कराई और नये किले बनवाये। घोड़े पालने की प्रथा रखी। 1) लाख घुड़सवार और 25000 पैदल सेना शाही थी। न्याय व्यवस्था अच्छी थी, पुलिस विभाग संगठित किया। गुप्तचर विभाग और डाक तथा तार विभाग की अच्छी व्यवस्था की।

भूमि प्रबन्ध

शेरशाह प्रथम बादशाह था जिसने उचित तरीके से सारी जमीन की नाप–तोल करवा कर लगान निश्चित किया। उपज का 1ध्3 भाग लगान के रूप में निश्चित किया गया।

3.6अकबर का प्रारम्भिक जीवन

अकबर का जन्म 15 अक्टूबर 1542 को अमरकोट के राणा वीरसाल के यहाँ हुआ था। उसकी माता का नाम हमीदाबानू बेगम तथा पिता का नाम हुमायूँ था। 1550–51 में काबुल पर जब हुमायूँ ने निर्णायक रूप से विजय प्राप्त कर ली तब अकबर को अपने पिता के साथ स्थायी रूप से रहने का मौका मिल सका।

हुमायूँ ने अकबर की शिक्षा–दीक्षा के अनेक प्रयास किए, परन्तु अकबर शिक्षा प्राप्त करने में रुचि नहीं रखता था। उसकी रुचि शिकार, घुड़सवारी, तीरंदाजी, तलवार चलाने इत्यादि में अधिक थी। इसलिए हुमायूँ ने उसे आरम्भसे ही राज–काज में लगाना आरम्भ किया। 1551 ई. में सिर्फ 9 वर्ष की अल्पायु में ही अकबर को गजनी का सुबेदार नियुक्त किया गया। हुमायूँ 1554 ई. में जब पुनः भारत विजय के लिए अग्रसर हुआ तो उसने अकबर को भी अपने साथ कर लिया। सिन्धु नदी पार करने के पश्चात् उसने अकबर को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। पंजाब से दिल्ली की तरफ प्रस्थान करने के पूर्व अकबर को पंजाब का गवर्नर बना दिया गया। संरक्षक का पद अब बैरम खाँ को सौंपा गया।

पंजाब में अकबर जब अफगानों की शक्ति को निर्मूल करने में लगा हुआ था उसी समय उसे कलानौर में हुमायूँ की मृत्यु का दुखद समाचार मिला। 14 फरवरी को कलानौर में अकबर का राज्याभिषेक हुआ। दिल्ली में भी अकबर के नाम का खुतवा पढ़ा गया। इस प्रकार, 13 वर्ष की अल्पायु में ही फरवरी, 1556 में अकबर भारत का मुगल सम्राट बन गया।

3.6.1 प्रशासन

अकबर का शासन धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त पर आधृत था। अकबर ने सभी नागरिकों को एक समान अधिकार प्रदान किया एवं सच्चे अर्थो में राष्ट्रीय राज्य सत्ता की स्थापना की। सम्राट की शक्ति एवं उसका सम्मान बढ़ाने के लिए अकबर ने अनेक प्रयास किए। उसने हिन्दू राज्य व्यवस्था में प्रचलित राजतन्त्र के दैवी सिद्धान्त को अपनाया। उसने खलीफा की प्रभुसत्ता को मानने से इनकार कर दिया एवं स्वयं को ईश्वर का प्रतिनिधि घोषित किया। उसने खलीफा के समान स्वयं ही खुतबा पढ़ा और जमींबोस (राजगद्दी के सामने जमीन चूमने की प्रथा) और सिजदा (सम्राट के समक्ष झुककर अभिवादन करने की प्रथा) आरम्भ की। 1579 ई. में महजर की घोषणा के बाद वह धार्मिक मामलों का भी प्रधान बन गया। उसके मंत्री और पदाधिकारी उसके पूर्ण नियंत्रण में थे। जनता में सम्राट के प्रति सम्मान एवं भय की भावना पैदा करने के लिए वह प्रतिदिन सुबह प्रजा को अपने महल के झरोखे से दर्शन देता था। उसके दरबार में आने–जाने की घोषणा नक्कारा बजाकर की जाती थी। दरबारके मुख्य सरदारों को पूरी साजो–सज्जा के साथ घोड़े पर बैठकर प्रतिदिन महल का चक्कर लगाना पड़ता था। यह प्रथा चौकी और तस्लीम–ए–चौकी कहलाती थी।

केन्द्रीय संगठन

केन्द्रीय प्रशासन का प्रधान स्वयं सम्राट ही था। वह प्रशासनिक, न्यायिक, सैनिक, आर्थिक एवं धार्मिक व्यवस्था का प्रधान था। एक प्रकार से वह निरंकुश शासक था। उत्तराधिकार के नियम में वंशानुगत तत्त्व को प्रधानता देकर सम्राट की स्थिति और भी मजबूत बना दी गई तथापि अकबर एक स्वेच्छाचारी अथवा अत्याचारी शासक नहीं था।

प्रशासनिक सुविधा के लिए अकबर ने एक मंत्रिमण्डल का गठन किया। अकबर के अधीन पाँच प्रमुख मंत्रियों अथवा अधिकारियों का उल्लेख मिलता है वकील, वजीर अथवा दीवान, सद्र–उस–सद्र, मीर वख्शी एवं खानसमा (मीर सामाँ)। अकबर ने वकील का पद पूर्ववत बनाए रखा। बैरम खाँ आरम्भ से इस पद पर था। वजीर, प्रशासनिक मामलों का प्रधान बन बैठा। प्रशासनिक मामलों के अतिरिक्त वित्त विभाग की भी देख भाल करता था। वजीर के रूप में उसकी स्थिति प्रधान मंत्री के सदृश थी। वित्त मंत्री के रूप में वह प्रमुख दीवान अथवा दीवान–ए–आला कहलाता था। वजीर अथवा दीवान–ए–आला की सहायता के लिए अनेक पदाधिकारी नियुक्त किए गए थे। इनमें प्रमुख थे दीवानदृएदृखालसा (राजकीय फरमानों और दस्तावेजो को सुरक्षित रखने वाला पदाधिकारी) एवं मुशरिफ (दफ्तर की देख भाल करने वाला)। सद्र–उस–सद्र धार्मिक विभाग का प्रधान होता था। सैनिक विभाग का प्रधान मीरबख्शी होता था। खानसमा अथवा मीरसामाँ सम्राट एवं शाही परिवार की आवश्यकताओं की देख भाल करता था।

इस प्रमुख मंत्रियों अथवा अधिकारियों के अतिरिक्त अकबर के अधीन अन्य अनेक पदाधिकारियों का भी उल्लेख मिलता है जैसे काजी–उल–कजात (प्रधान न्यायाधीश) जो प्रधान मुफ्ती की सहायता से न्यायका कार्य देखता था।, मुहतसिब (नैतिक नियमों का पालक), मीर–ए–आतिश (शाही तोप खाना का प्रधान), दरोगा–ए–डाकचौकी (सूचना एवं गुप्तचर विभाग का प्रधान) आदि।

उसने सेना का संगठन मनसबदारी व्यवस्था के आधार पर किया। इस व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक सरदार और सैनिक पदाधिकारी का मनसब (पद) निश्चित किया गया। मनसबदारी

व्यवस्था में संख्या को बहुत अधिक महत्व प्रदान किया गया। सबसे छोटा मनसब 10 का और अधिकतम 7000 का था।

अकबर की सेना में मनसबदारों की सेना के अतिरिक्त अहदी और दाखिली सैनिकों की टुकड़ियाँ भी थी। अहदी बादशाह के विश्वासपात्र और व्यक्तिगत सैनिक थे। दाखिली वे सैनिक थे जिनको बादशाह नियुक्त कर विभिन्न मनसबदारों को देता था। सबसे महत्वपूर्ण घुड़सवार सेना थी जिसकी विभिन्न श्रेणियां थी।

राजकीय आय का स्रोत भूमिकर अथवा लगान थी। भूमि की चार श्रेणियां– पोलज, परती, छच्छर एवं बंजर। इसके अतिरिक्त राज्य को सीमा शुल्क, आन्तरिक व्यापार शुल्क घाट कर आदि से भी आमदनी होती थी।

प्रांतीय एवं स्थानीय शासन

1581 ई. में अकबर ने पूरे साम्राज्य को 12 सूबों में बांटा था। बाद में इनकी संख्या 15 हो गई। सूबे का प्रधान सूबेदार अथवा सिपहसालार होता था। सूबे के अन्य पदाधिकारी– बख्शी, सद्र, काजी, मीर अदल और मुफ्ती थे। कोतवाल, मीरबहर (चुंगी वसूल करने वाला) तथा वाकिया नवीस भी प्रशासन में सहायता पहुँचाते थे।

सूबा क्रमशः सरकार और परगना में विभाजित था। सरकार का सर्वोच्च पदाधिकारी फौजदार कहलाता था। वह कोतवाल, आमिल एवं काजी जैसे पदाधिकारियों की सहायता से प्रशासन चलाता था। परगना के शासन की जिम्मेदारी शिकदार, आमिल और कानूनगों की थी। इनकी सहायता के लिएफोतदार (कोषाध्यक्ष) और लेखक भी रहते थे। गाँवों की व्यवस्था में ग्राम पंचायतों का भी महत्वपूर्ण योगदान था। नगरों की व्यवस्था नगर कोतवाल देखते थे।

3.7 अकबर की विजयें

अकबर ने बैरम खाँ की संरक्षकता में (1556–60) में उत्तरी भारत के अनेक स्थानों–मानकोट, जौनपुर, संभल, लखनऊ और बनारस पर अधिकार स्थापित किया। मेवात, ग्वालियर और अजमेर भी बैरम खाँ के प्रयासों से मुगल राज्य में सम्मिलित कर लिए गए। 1560 ई. तक अकबर बैरम खाँ के नियंत्रण से मुक्त हो चुका था। 1560 से 1579 ई. के मध्य अकबर ने मालवा, जौनपुर, चुनार, जयपुर, मेड़ता, गोंडवाना (गढ़कटंगा), मेवाड़ रणथंभौर, कालिंजर, गुजरात एवं बंगाल और बिहार पर विजय प्राप्त की। 1570–1605 के मध्य अकबर ने उड़ीसा, काबुल, काश्मीर, सिन्ध, बलूचिस्तान और कांधार तथा दक्षिण भारत के खानदेश, अहमद नगर को जीत लिया। खानदेश की विजय अकबर की अंतिम विजय थी। इस प्रकार अकबर के साम्राज्य विस्तार की सीमा उत्तर पश्चिम में काबुल से लेकर पूर्व में बंगाल तक एवं दक्षिण भारत तक विस्तृत थी।

3.8 धर्म

अकबर ने उदार धार्मिक नीति अपनाई तथा सभी धर्मो एवं सम्प्रदायों में एकता और समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। 1582 ई. उसने धार्मिक नेताओं, महत्वपूर्ण सरदारों एवं अन्य गण्यमान व्यक्तियों की सभा बुलाई एवं उनसे अनुरोध किया कि वे कोई ऐसा मार्ग

निकालें जिससे साम्प्रदायिक भेद भाव भूलकर सभी व्यक्ति शाश्वत धर्म के सार्वभौम, सर्वमान्य आचरण युक्त सिद्धान्तों के अनुयायी बन सकें। इस सभी ने अकबर से ही ऐसा मार्ग निकालने का अनुरोध किया। फलतः, अकबर ने 1582 ई. में तौहीद–ए–ईलाही (दैवी एकेश्वरवाद) की घोषणा की जो बाद में दीन–ए–ईलाही (ईश्वर का धर्म) के नाम से विख्यात हुआ। वास्तविकता यह है कि दीन–ए–ईलाही किसी प्रकार का नया धर्म नहीं था। यह वैसे व्यक्तियों का समूह था जो अकबर के विचारों सेसहमत थे और उसे अपना धार्मिक गुरु मानते थे। सुलह–कुल की नीति को ध्यान में रखते हुए उसने सभी धर्मो की अच्छी बातों का समावेश अपने धार्मिक दर्शन में किया।

मोहसिन फानी विरचित ग्रन्थ दबिस्तान मजाहिब में इस धर्म के पालन करने वालों के लिए निश्चित आचरणों का उल्लेख किया गया है। उन्हें मानना पड़ता था कि ईश्वर एक है और उसका प्रतिनिधि अकबर है। अकबर को गुरू और इस धर्म को मानने वालों को उसके शिष्य के समान समझा जाता था। प्रत्येक रविवार की अकबर अपने शिष्यों को दीक्षा देकर इस धर्म में प्रविष्ट करवाता था। शिष्य को गुरू (अकबर) के सामने सिजदा करना पड़ता था। अकबर उसे सम्मनित करते हुए उसके सिर पर पगड़ी रखता एवं उसे अपना एक शष्ठ देता था जिस पर अल्ला हो अकबर (ईश्वर ही अकबर) सबसे महान है) खुदा रहता था। इस धर्म के अनुयायी अभिवादन और प्रति अभिवादन के लिए क्रमशः अल्ला हो अकबर एवं जल्ला जलाल हूँ का नारा लगाते थे।

दीन–ए–ईलाही को मानने वालों के लिए अपने मूल धर्म के परित्याग की आवश्यकता नहीं थी। नए धर्म के सदस्यों के लिए निरामिष होना आवश्यक था। सदस्यों को अपनी मृत्यु का भोज भी अपने जीवन में ही देना पड़ता था। दीन–ए–ईलाही को स्वीकार करने वालों की चार विभिन्न श्रेणियां थीं। पहली श्रेणी में वैसे सदस्य थे जो हमेशा सम्राट के लिए अपनी सम्पत्ति समर्पित करने को तैयार रहते थे। दूसरी श्रेणी के सदस्य सम्पत्ति के अतिरिक्त सम्राट के लिए अपना जीवन अर्पण करने को भी तैयार रहते थे। तीसरी श्रेणी वैसे सदस्यों की थी जो धन एवं जीवन के साथ–साथ सम्राट के लिए अपनी सन्तान को भी निछावर कर सकते थे। अन्तिम श्रेणी के सदस्य अपना सब कुछ सम्राट के लिए अर्पण करने को तैयार रहते थे।

राज्य के 22 महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने इसे स्वीकारा था। इनमें बीरबल ही एकमात्र हिन्दू था जिसने इस धर्म को स्वीकार किया। कट्टर मुसलमानों नेअकबर द्वारा इस्लाम धर्म एवं इस्लामी प्रथाओं पर किए गए आघातों से कुद्ध होकर इसे ठुकरा दिया।

दीन–ए–ईलाही के द्वारा अकबर राष्ट्रीयता एवं धार्मिक सहिष्णुता की भावना का विकास करने में सफल हो सका। यह उसकी सुलह कुल की नीति के कार्यान्वयन का एक प्रमुख अस्त्र बन गया। इसके चलते धार्मिक विद्वेष बहुत हद तक समाप्त हो गए।

3.9 राजपूत नीति

अकबर ने सभी राजपूत राज्यों के साथ एक समान नीति नहीं अपनाई। उसने विभिन्न राज्यों के प्रति तीन अलग–अलग नीतियां अपनाई। पहली श्रेणी में वैसे राज्य आते हैं जिन्होंने आसानी से अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली। उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ तथा उन्हें मुगल प्रशासन और सेना में ऊँचे ओहदे प्रदान किए गए। दूसरी

श्रेणी में वैसे राज्य थे जिन्होंने आरम्भ में अकबर का विरोध तो किया परन्तु उसकी शक्ति देख कर उसकी अधीनता स्वीकार कर ली अथवा उसके साथ सम्मानजनक समझौता कर लिया। मेवाड़ ही एक ऐसा राज्य था जिसने अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की और अकबर को जीवनपर्यन्त मेवाड़ के साथ युद्ध करना पड़ा।

1562 ई. में जब अकबर अजमेर गया तो आमेर के राजा भारमल अथवा बिहारीमल ने अकबर से भेंट कर उसकी अधीनता स्वीकार कर ली एवं अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दिया। भारमल को मनसब प्रदान किया गया एवं उनके पुत्र भगवान दास और पौत्र मान सिंह को मुगल सेना में स्थान दिया गया। इसी वैवाहिक सम्बन्ध के परिणामस्वरूप अकबर के उत्तराधिकारी जहाँगीर का जन्म हुआ। आमेर की देखा–देखी कुछ अन्य राज्यों ने भी अकबर से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। 1570 ई. बीकानेर के शासक राज्य कल्याणमल और जैसलमेर के राजा हरराय के साथ भी वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ। 1584 ई. में सलीम (जहाँगीर) का विवाह अकबर ने भगवान दास की पुत्री सेकिया जिससे खुसरो का जन्म हुआ। ये सभी राज्य अकबर के अधीनस्थ और मित्र बन गए।

भारतीय राजनीति में मुगल – राजपूत मैत्री के परिणाम स्वरूप मुगलों के राजनीतिक प्रतिद्वन्दी अफगानों को राजसत्ता से निर्णायक रूप से वंचित हो जाना पड़ा। हिन्दू मुसलमान दोनों ने कन्धा से कन्धा लगा कर मुगल राज्य की सेवा और सुरक्षा की। अकबर किसी जाति और धर्म–विशेष का नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत का सम्राट माना जाने लगा।

3.10 सारांश

भारत में मुगल साम्राज्य का संस्थापक बाबर (1526–30) था। बाबर के पश्चात् हुमायूँ (1530–1556) बाबर द्वारा स्थापित साम्राज्य को सुरक्षित बनाये रखा हलांकि उसके जीवन की सबसे बड़ी भूल यह थी कि उसने अपने साम्राज्य का विभाजन अपने भाईयों में कर दिया। ये भाई कठिन परिस्थिति में भी हुमायूँ का सहयोग नहीं कर सके। फलतः हुमायूँ को चौसा और कन्नौज के युद्ध में पराजय का का सामना करना पड़ा। अन्ततः हुमायूँ ने फारस के शाह की सहायता से सिकन्दर सूर को परास्त कर दिल्ली विजय की। शेरशाह सूरी को द्वितीय अफगान राज्य का संस्थापक माना जाता है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास में उसकी गणना एक सक्षम प्रशासक के रूप में की जाती है। अकबर ने शेरशाह द्वारा निर्देशित प्रशासन को संशोधनों एवं परिवर्धनों के साथ अपनाया। अकबर ने मुगल साम्राज्य को स्थायित्व प्रदान किया। सभी धर्मो एवं सम्प्रदायों में एकता और समन्वय स्थापित किया। उसकी राजपूत नीति से अफगान राज सत्ता से वंचित हो गये और हिन्दू मुसलमान दोनों ने मुगल राज्य की सेवा और सुरक्षा की।

3.11 संभावित उत्तर

- बाबर फरगना (मध्य एशिया के एक छोटे राज्य) का शासक था।
- पानीपत का प्रथम युद्ध 1526 ई. में बाबर और इब्राहिम लोदी के मध्य हुआ था।
- खानवा युद्ध के पश्चात् बाबर ने श्गाजीश की उपाधि धारण की।
- घाघरा का युद्ध (1529 ई.) भारत में बाबर का अन्तिम युद्ध था।
- 1530 ई. को आगरा में बाबर की मृत्यु हो गई।

- हुमायूँ का राज्याभिषेक आगरा में, 30 दिसम्बर, 1530 ई. को हुआ।
- शेरशाह के बचपन का नाम फरीद था।
- शेरशाह प्रथम बादशाह था जिसने उचित तरीके से सारी जमीन की नाप–तोल करा कर लगान निश्चित किया।
- अकबर ने 1582 ई. में दीन–ए–ईलाही (ईश्वर का धर्म) की घोषणा की।
- अकबर की राजपूत नीति का शिकार सर्वप्रथम आमेर का राजा हुआ।

3.12 सन्दर्भ / अग्र अध्ययन

सन्दर्भ

1. शर्मा, एल.पी.: मध्यकालीन भारत, आगरा.

2. वर्मा, हरिश्चन्द्र : मध्यकालीन भारत, भाग–2, दिल्ली.

अग्र अध्ययन

1. NCERT: मध्यकालीन भारत, दिल्ली.

2. श्रीवास्तव, ए.एल. : मध्यकालीन भारत, आगरा.

इकाई—4

संरचना

4.1 प्रस्तावना

इकाई—6 में हम मुगल बादशाह जहाँगीर और शाहजहाँ के अधीन मुगल साम्राज्य की प्रगति, औरंगजेब और राजपूत सम्बन्ध, धार्मिक नीति, दकन नीति और मराठा सम्बन्ध पर विचार करेंगे।

परिचय

1605—58 ई. तक मुगल वंश के दो विख्यात शासको— जहाँगीर और शाहजहाँ ने शासन किया। इन दोनों शासकों ने सामान्यतः अकबर द्वारा निर्देशित मार्ग पर चलते हुए मुगलसत्ता की जड़े और अधिक मजबूत की। राजपूतों, अफगानों और मराठों से मित्रवत सम्बन्ध बने, प्रशासनिक व्यवस्था मजबूत हुई तथा कला—कौशल की प्रगति हुई। इनके समय में मध्य एशियाई राज्यों से भी सम्बन्ध सुदृढ़ करने के प्रयास किए गए एवं यूरोपीय व्यापारियों को अनेक व्यापारिक रियायतें दी गई जिससे भारत का विदेशी व्यापार बढ़ा, परन्तु दुर्भाग्यवश इन शासकों की अदूरदर्शिता के कारण अनेक विघटनकारी तत्व भी उभरे। जहाँगीर के समय से मुगलों और सिखों के सम्बन्ध बिगड़ गए, कांधार से मुगलों को हाथ धोना पड़ा, दक्षिणी राज्यों से लम्बा संघर्ष चला जिससे मुगलों को कोई विशेष लाभ नहीं हुआ, उत्तराधिकार के लिए संघर्ष एवं षड्यंत्र की परम्परा आरम्भ हो गई तथा मुगल राजनीति में स्त्रियों एवं प्रभावशाली सरदारों का महत्व बढ़ गया। सबसे बड़ी बात यह हुई कि मुगलकालीन आर्थिक सम्पन्नता का लाभ कुछ गिने—चुने लोगों तक ही सीमित रहा, जन सामान्य को इससे विशेष लाभ नहीं पहुँचा। इससे सामाजिक असन्तोष एवं वर्ग विभेद बढ़ा। इन घटनाओं का मुगल इतिहास पर गहरा प्रभाव पड़ा। 1659 ई. में औरंगजेब ने विधिवत अपना राज्याभिषेक किया। उसने करीब पचास वर्षो (1707 ई.) तकशासन किया। उसके समय में मुगल साम्राज्य की सीमा का विस्तार अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। उसकी मृत्यु के साथ ही पतन की प्रक्रिया शुरू हुई।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- जहाँगीर के काल की राजनीतिक घटनाओं से अवगत हो सकेंगे।
- शाहजहाँ के काल की राजनीतिक घटनाओं से परिचित हो सकेंगे।
- औरंगजेब के समय मुगल राजपूत सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- औरंगजेब की धार्मिक नीति से अवगत हो सकेंगे।
- औरंगजेब की दकन नीति से परिचित हो सकेंगे।
- औरंगजेब के समय मुगल—मराठा सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.3 जहाँगीर (1605—1627)

1605 ई. में अकबर की मृत्यु के पश्चात् उसका सबसे बड़ा पुत्र जहाँगीर अथवा सलीम राजगद्दी का मालिक बना। उसने अकबर द्वारा स्थापित विशाल मुगल साम्राज्य की सुरक्षा की, न्याय के प्रशासन पर अत्यधिक बल दिया एवं संगीत और चित्रकला को विशेष प्रश्रय दिया, परन्तु उसी के समय में सिखों से सम्बन्ध बिगड़े, कांधार मुगलों के हाथों से निकल गया, प्रशासन पर नूरजहाँ और उसके गुट का प्रभाव स्थापित हुआ जिससे मुगल दरबार में गुटबंदी बढ़ गई और कुछ विद्रोह भी हुए।

जहाँगीर के शासन काल की प्रमुख राजनीतिक घटनाएँ

जहाँगीर का जन्म 30 अगस्त, 1569 ई. को हुआ। उसकी माता मानमती आमेर के कछवाहा राजा भारमल की पुत्री थी जिसके साथ अकबर ने 1562 ई. में अपना विवाह किया था। उसका जन्म विख्यात सूफी संत शेख सलीम चिश्ती की अनुकम्पा से हुआ था, इसलिए वह सलीम के नाम से पुकारा जाता था।अकबर उसे प्यार से शेखू बाबा कहता था। अब्दुर्रहीम खानखाना के योग्य संरक्षण में सलीम ने फारसी, तुर्की एवं हिन्दी की शिक्षा ग्रहण की। उसे प्रशासनिक एवं सैनिक शिक्षा भी दी गई। उसे व्यावहारिक शिक्षा भी दी गई। 1581 ई. में उसे सेना का संचालन करने एवं न्याय तथा राजकीय शिष्टाचार विभागों का कार्य देखने की जिम्मेदारी सौंपी गई। उसे आरम्भ में श्दस हजारीश का पद भी मिला जिसे बाद में बढ़ाकर श्बारह हजारीश बना दिया गया। सलीम ने अनेक विवाह किए जिसमें सबसे प्रमुख था जगत गुसाई अथवा जोधाबाई से विवाह। शासक बनने के पश्चात् उसने मेहरून्निसा अथवा नूरजहाँ से भी विवाह किया जिसका तत्कालीन राजनीति पर गहरा असर हुआ। जहाँगीर सुरा सुन्दरी का व्यसनी था।

शासक बनने के पूर्व जहाँगीर के जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटना है उसका अकबर के विरुद्ध बगावत करना। दरबार में उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर षड्यंत्र होने लगे थे। मानसिंह और अजीज कोका खुसरो को गद्दी पर बिठाना चाहते थे परन्तु रामदास कछवाहा के प्रयासों से अपनी मृत्यु के कुछ दिनों पूर्व ही अकबर ने सलीम को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। वह 1605 ई. में नरूद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह गाजी के नाम से आगरा में गद्दी पर बैठा।

उसने अबुल फजल के हत्यारे वीर सिंह बुन्देला को दरबार में उचित स्थान दिया। मिर्जा गयास बेग को श्एतमाउद्दौला की उपाधि प्रदान की गई और उसे दीवान का पद सौंपा गया। महावत खाँ भी एक प्रमुख सरदार बन बैठा। गद्दी पर बैठने के उपलक्ष्य में जहाँगीर ने सिक्कें भी ढलवाए। वाकियात–ए–जहाँगीरी नामक ग्रन्थ से यह भी पता लगता है कि जहाँगीर ने आगरा किला से यमुना नदी के किनारे तक 30 गज लम्बी एक सोने की जंजीर, जिससे 60 घंटियाँ लटकी हुई थी, टंगवाई। इसे श्न्याय की जंजीरश कहा जाता है। इसका उद्देश्य फरियादी को सम्राट तक सीधा फरियाद करने का मौका प्रदान करना था। जहाँगीर ने अपने जन्म दिन, राज्यारोहण के दिन (वृहस्पतिवार) और अकबर के जन्म दिन (रविवार) पर पशुबध पर पाबंदी लगा दी। उसने सब पुराने जागीरदारों एवं मनसबदारों के अधिकारों को स्थायी बना दिया और बाद में कुछ के मनसब में बृद्धि भी की। दानस्वरूप दी गई सम्पत्ति (मददेमआश) उन्हीं व्यक्तियों के पास रहने दी गई। उन्हें स्थायी बना दिया गया। बारहवें अध्यादेश के अनुसार जहाँगीर ने जेल में बन्द सभी कैदियों को मुक्त करने की व्यवस्था की।

अप्रैल, 1606 ई. में बादशाह के ज्येष्ठ पुत्र शहजादा खुसरो ने अपने पिता के विरुद्ध बगावत का झण्डा खड़ा कर दिया। अन्ततः खुसरो को अन्धा करवाकर हत्या कर दी गई। इस प्रकार खुसरो का विद्रोह विफल हो गया।

दुर्भाग्यवश जहाँगीर के समय में राजनीतिक कारणों से मुगल–सिख सम्बन्ध कटु हो गए जिसका भारतीय इतिहास पर विशेष प्रभाव पड़ा। 1606 ई. में विद्रोही शाहजादा खुसरो गुरु अर्जुन के पास सहायता के लिए पहुँचा। गुरू ने उसे अपना आशीर्वाद दिया एवं कुछ आर्थिक सहायता भी। गुरू के इस कार्य से जहाँगीर अत्यंत कुपित हुआ। उसने गुरू को 2 लाख रूपया जुर्माना देने तथा गुरू साहब में से कुछ गीतों को निकालने की आज्ञा दी जिसे गुरू ने ठुकरा दिया। फलस्वरूप गुरू को गिरफ्तार करने, उनकी सम्पत्ति जब्त करने एवं लाहौर के नाजिम चंदू शाह ने व्यक्तिगत कारणों से गुरु पर अमानवीय अत्याचार कर उनकी हत्या कर दी।

जहाँगीर के समय की सबसे प्रमुख घटना मेवाड़ पर विजय एवं दक्षिण में सैनिक अभियान था। जहाँगीर के समय में मुगलों को सैनिक क्षति भी उठानी पड़ी। कांधार उसके हाथों से निकल गया।

जहाँगीर के शासन की सर्वप्रमुख घटना है उसका नूरजहाँ से 1611 ई. में विवाह होना। इस विवाह का तत्कालीन राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस समय से लेकर जहाँगीर की मृत्यु तक शासन की वास्तविक बागडोर नूरजहाँ और उसके समर्थकों के हाथों में ही रही। जहाँगीर नूरजहाँ के हाथों की कठपुतली बना रहा। जहाँगीर की अपने प्रति आसक्ति देख कर नूरजहाँ ने अपने समर्थकों का एक दल बना लिया और सारी शक्ति अपने हाथों में केन्द्रितकर ली। फलस्वरूप, नूरजहाँ के विरुद्ध प्रतिक्रिया आरम्भ हुई और साम्राज्य को शाहजहाँ और महावत खाँ का प्रबल विद्रोह झेलना पड़ा। इसके दूरगामी परिणाम निकले। इन दुर्बलताओं के बावजूद वह अपने पिता द्वारा स्थापित साम्राज्य की एकता एवं समृद्धि बनाए रखने में सफल हुआ। यही उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी।

4.4 शाहजहाँ (1628–58)

शाहजहाँ मुगल वंश का एक महत्वपूर्ण शासक था। उसने लगभग 30 वर्षो तक शासन किया। उसके समय में दक्षिणी राज्यों को मुगलों के प्रभावशाली नियंत्रण में लाने का प्रयास हुआ, कांधार को पुनः ईरानियों से वापस लेने की कोशिश की गई एवं बल्ख पर अधिकार करने का प्रयत्न किया गया। शाहजहाँ ने कला–कौशल विशेषतया स्थापत्य कला के विकास पर अत्यधिक ध्यान दिया एवं अनेक भव्य भवनों का निर्माण करवाया। इस समय साम्राज्य की आर्थिक समृद्धि बढ़ी। इस कारण, अनेक विद्वानों ने शाहजहाँ के युग को मुगलकालीन श्स्वर्णयुगश की संज्ञा दी है, परन्तु इसी समय अनेक विघटनकारी तत्व भी उभरे। दक्षिण एवं मध्य एशियाई युद्धों में अपार जन–धन की हानि हुई जिससे मुगलों की शक्ति और प्रतिष्ठा को गहरी ठेस लगी साम्राज्य के अन्तर्गत अनेक विद्रोह हुए और उत्तराधिकार का युद्ध हुआ। स्वयं शाहजहाँ को अपने जीवन का उत्तरार्द्ध एक कैदी के रूप में कैदखाने में गुजारनी पड़ी। उत्तराधिकार के युद्ध ने मुगल साम्राज्य की जड़ों पर तीखा प्रहार किया।

शाहजहाँ का वास्तविक नाम खुर्रम था। उसका जन्म 5 जनवरी, 1592 को एक राजपूत राजकुमारी (जोधाबाई) से हुआ था। उसके लालन–पालन पर अकबर एवं स्वयं उसके पिता जहाँगीर ने पर्याप्त ध्यान दिया। उसे हिन्दी, फारसी, इतिहास इत्यादि का अच्छा ज्ञान था, परन्तु उसकी अभिरूचि सैनिक कार्यों में ज्यादा थी। उसे तीरंदाजी और घुड़सवारी से विशेष लगाव था। अपनी अभिरूचि के कारण वह शीघ्र ही सैन्य कार्यों में निपुण हो गया। अपने बड़े पुत्र खुसरो के विद्रोही स्वभाव के कारण जहाँगीर खुर्रम पर विशेष कृपा रखता था।

1606 ई. में जहाँगीर ने, जब वह खुसरो का पीछा कर रहा था तो राजधानी की सुरक्षा का भार खुर्रम को सौंपा। अगले वर्ष उसे 8000 जात और 5000 सवार का मनसबदार बनाया गया। आगे चलकर उसका ओहदा 30,000 जात और 20,000 सवार तक पहुँच गया। उसे हिसार फिरोजा की जागीर भी दी गई जो सामान्यतः गद्दी के उत्तराधिकारी को दी जाती थी। शाहजहाँ के अनेक विवाह हुए जिसमें सबसे प्रमुख था आसफ खाँ की पुत्री अर्जुमंद बानू बेगम (मुमताज–ए–महल) के साथ। जहाँगीर के शासन काल में खुर्रम ने अनेक युद्धों का सफलतापूर्वक संचालन किया। मेवाड़ पर विजय उसकी सबसे बड़ी विजय थी। अहमदनगर पर अधिकार करने के उपलक्ष्य में जहाँगीर ने उसे श्शाहजहाँ की उपाधि प्रदान की। वह श्नूरजहाँ जनता का एक प्रभावशाली सदस्य था। नूरजहाँ आरम्भ में उसे ही उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी, परन्तु बाद में उसने अपने दामाद शहरयार का पक्ष लेना आरम्भ कर दिया। क्षुब्ध होकर शाहजहाँ ने बगावत कर दी परन्तु विफल होकर उसने जहाँगीर से क्षमा माँग ली।

शाहजहाँ के श्वसुर आसफ खाँ ने लाहौर में शाहजहाँ को सम्राट घोषित कर दिया एवं उसके नाम का खुतबा पढ़ा। शाहजहाँ आगरा पहुँच गया, जहाँ 4 फरवरी, 1628 को उसका विधिवत अभिषेक हुआ। शाहजहाँ रक्त रंजित तलवार के साथ गद्दी पर बैठा था, इसलिए सबको प्रसन्न करने के लिए उसने मुक्तहस्त से धन बाँटा। महावत खाँ को 7000 जात और 7000 सवार का मनसब तथा खान खाना की उपाधि मिली। आसफ खाँ को विशेष सम्मान दिया गया। उसे 8000 जात और 8000 सवार का मनसब तथा श्वकीलश का पद मिला। नूरजहाँ के भरण–पोषण के लिए भी राशि निश्चित कर दी गई।

शाहजहाँ का शासक काल मुगलकालीन भारतीय इतिहास में सामान्यतः स्वर्णयुग के नाम से विख्यात है। अनेक तत्कालीन इतिहासकारों, विदेशी यात्रियों तथा आधुनिक इतिहासज्ञों का मानना है कि शाहजहाँ के समय में मुगल साम्राज्य की चतुर्दिक प्रगति हुई। साम्राज्य में शान्ति एवं सुव्यवस्था बनी रही, विद्रोह नहीं के बराबर हुए, आर्थिक प्रगति हुई, एवं कला–कौशल, शिक्षा एवं साहित्य का चरमोत्कर्ष हुआ। दरबार की शान–शौकत पराकाष्ठा पर पहुँच गई।

इसलिए खफी खाँ, राय भारमल जैसे समकालीन इतिहासकार शाहजहाँ के शासन की प्रशंसा करते हैं। इसके विपरीत अनेक विद्वानों की मान्यता है कि शाहजहाँ का शासन काल श्स्वर्णयुगश नहीं था वरन् इस समय की ऊपर चमक–दमक में मुगल साम्राज्य के पतन के बीज अधिक सशक्त थे। आधुनिक इतिहासकारों ने शाहजहाँ के शासन काल की तुलना फ्रांस के सम्राट लुई चौदहवें से की है। तथ्य भी यही है कि शाहजहाँ का शासन काल ऊपरी तौर पर ही श्स्वर्णयुगश प्रतीत होता है, वास्तविक रूप में नहीं।

4.5 औरंगजेब और राजपूत सम्बन्ध

मुगल शासकों के समय में राजपूत उत्तर भारत की एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति थे। बाबर से शाहजहाँ के समय तक मुगलों ने राजपूतों की शक्ति को कभी नजरअंदाज नहीं किया। राजपूत राज्यों की शक्ति एवं उनके राजनीतिक महत्व को देखते हुए अकबर ने परिस्थिति के अनुसार मैत्रीपूर्ण एवं वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। विद्रोही राजपूत राज्यों को सैन्य बल के आधार पर भी साम्राज्य की छत्रछाया में लाने का प्रयास किया गया। राजपूतों ने मुगलों की सेना एवं प्रशासन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। औरंगजेब के सम्राट बनने के पूर्व और उसके कुछ वर्षो उपरान्त भी औरंगजेब और राजपूतों के सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण बने रहे, परन्तु धीरे–धीरे ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई जिससे मुगलों और राजपूतों के सम्बन्ध वैमनस्यपूर्ण हो गए। इसका एक प्रधान कारण था उत्ताधिकार का युद्ध। इस युद्ध में राजपूतों ने दारा का पक्ष लिया, इससे औरंगजेब को उनकी स्वामिभक्ति में सन्देह हुआ, तथापि उसने मेवाड़ को अपने पक्ष में मिलाने की कोशिश की। राणा के मनसब में बढ़ोत्तरी की। जसवंत सिंह को क्षमा प्रदान कर गुजरात का प्रशासक भी बनाया गया। इसी प्रकार जय सिंह से भी औरंगजेब के सम्बन्ध मधुर बने रहे लेकिन धीरे–धीरे मुगल राजपूत सम्बन्ध बिगड़ने लगे। औरंगजेब की धार्मिक नीतियों से राजपूतों में अविश्वास की भावना पैदा हुई। वे मुगलों से अपने–आपको स्वतन्त्र करने के प्रयास में लग गए। औरंगजेब को भी भय था कि कहीं राजपूत मराठों के साथ मिल कर मुगलों की सत्ता समाप्त नहीं कर दें। 1678 ई. तक प्रमुख राजपूत सेनानायकों,आमेर के जय सिंह और मारवाड़ के जसवंत सिंह की मृत्यु हो चुकी थी। इसलिए, औरंगजेब ने राजपूत राज्यों पर अपना शिकंजा कसने का अभियान आरम्भ कर दिया। औरंगजेब की इस अदूरदर्शी नीति ने मुगल–राजपूत संघर्ष की एक लम्बी श्रृंखला आरम्भ कर दी जो अंततः मुगल साम्राज्य के लिए अहितकर सिद्ध हुई।

मारवाड़ के साथ सम्बन्ध

1679 ई. में औरंगजेब ने शहजादा अकबर के अधीन एक सेना मारवाड़ पर आक्रमण करने के लिए भेजी। वह स्वयं भी जयपुर जा धमका। दुर्गादास ने मुगल सेना का वीरतापूर्वक सामना किया परन्तु वह मुगलों के समक्ष नहीं टिक सका। वह अजीत सिंह को लेकर मेवाड़ के राणा की शरण में चला गया। औरंगजेब ने जोधपुर पर अधिकार कर अनेक मन्दिरों एवं मूर्तियों को नष्ट कर दिया। पराजित होकर भी राठौरों ने हथियार नहीं डाले और गुरिल्ला युद्ध द्वारा मुगलों की परेशान करते रहे। मुगलों के विरूद्ध राठौरों ने स्वातन्त्र्य संग्राम आरम्भ कर दिया। इस युद्ध में स्त्रियों और बच्चों ने भी भाग लिया। मुगलों को मारवाड में कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा।

मेवाड़ के साथ युद्ध

मारवाड़ में हुई घटनाओं से मेवाड़ के सिसोदिया भी क्षुब्ध थे। उन्हें औरंगजेब की ओर से आशंका बनी हुई थी। अजीत सिंह को शरण देकर राणा राजसिंह ने औरंगजेब की दुश्मनी मोल ले ली। जब औरंगजेब ने मेवाड़ पर भी जजिया लगा दिया तो राणा ने इसे देने से इनकार कर दिया। क्रुद्ध होकर औरंगजेब ने 1679 ई. में मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। राणा मुगल सेना का मुकाबला करने में असमर्थ रहा। उसे उदयपुर छोड़कर पहाड़ियों में शरण लेनी पड़ी। उदयपुर और चित्तौड़ पर अधिकार कर मुगलों ने अनेक मन्दिरों को नष्ट किया। राणा पहाड़ियों से ही गुरिल्ला युद्ध कर मुगलों को परेशान करता रहा। शहजादा

अकबर की सेना की रसद एवं युद्ध सामग्री लूटकर उसे निःसहाय बना दिया गया। मुगलों की स्थिति दुर्बल हो गई। वे मेवाड़ के अन्दर प्रवेश करने सेघबड़ाने लगे। राजसिंह की मृत्यु (1680 ई.) तक मुगल सेना मेवाड़ में कोई उल्लेखनीय सफलता प्राप्त नहीं कर सकी। नए राणा जगत सिंह ने भी युद्ध जारी रखा।

शहजादा अकबर का विद्रोह

औरंगजेब की नीतियों और मेवाड़ से हटाए जाने से क्षुब्ध होकर शहजादा अकबर ने 1681 ई. में अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उसने अपने आपको सम्राट घोषित किया तथा राजपूतों के साथ मिल गया। उसने दुर्गादास के साथ मिलकर अजमेर पर आक्रमण कर दिया। औरंगजेब इस समय अजमेर में ही था। औरंगजेब ने कूटनीति चाल चलकर राजपूतों और अकबर में सन्देह पैदा कर दिया। राजपूतों ने उसका साथ छोड़ दिया। विद्रोही राजकुमार की स्थिति दयनीय हो गई। बाद में वास्तविकता जान कर दुर्गादास उसे सुरक्षित मराठा राजा शम्भु जी के पास पहुँचाने में सफल हो सका। मराठों से भी उसे कोई विशेष सहायता नहीं मिल सकी। हताश होकर वह फारस चला गया जहाँ 1704 ई में उसकी मृत्यु हो गई।

मेवाड़ के साथ संधि

लगातार युद्ध के कारण मेवाड़ की स्थिति दयनीय हो गई। मुगलों को भी युद्ध में कोई विशेष उपलब्धि नहीं हुई। इसलिए, दोनों पक्षों ने जून, 1681 में संधि कर ली। राणा ने जजिया देने के बदले मांडलपुर और बदनूर परगने मुगलों को सौंप दिए। जगत सिंह को मेवाड़ का राणा स्वीकार कर लिया गया। उसे पाँच हजार का मनसब दिया गया। उसके पुत्र को भी मुगल दरबार मे नौकरी दी गई। राणा ने अजीत सिंह का पक्ष नहीं लेने का वादा किया औरंगजेब ने यह आश्वासन अवश्य दिया कि वह अजीत सिंह का राज्य उसके वयस्क होने पर वापस कर देगा। इस संधि द्वारा मेवाड़ और मुगलों के बीच पुराने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध पुनः स्थापित हो गए। 1707 ई. तक इन सम्बन्धों में को परिवर्तन नहीं आया।

मारवाड़ के साथ संघर्ष जारी

मेवाड़ के राणा के युद्ध से अलग हो जाने के बावजूद राठौरों ने मुगलों से संघर्ष जारी रखा। औरंगजेब ने मुगलों को छापामार युद्ध द्वारा परेशान करना जारी रखा। औरंगजेब का ध्यान दक्षिण में लगे होने के कारण वह राठौरो की तरफ पूरा ध्यान नहीं दे सका। राठौर भी कभी मुगलों से समझौता करते तो कभी युद्ध। यही स्थिति औरंगजेब की मृत्यु तक बनी रही। 1709 ई. में बहादुरशाह (शाह आलम प्रथम) ने अजीत सिंह को मारवाड़ का वैधानिक शासक स्वीकार कर लिया। इसके साथ ही मारवाड़ का मुगलों से संघर्ष समाप्त हो गया।

औरंगजेब की राजपूत नीति अदूरदर्शितापूर्ण थी। राजपूतों से वैमनस्य मोल लेकर उसने अपनी स्थिति दुर्बल कर ली। राजपूतों के विद्रोह ने मुगलों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा पर गहरा आघात किया। मुगल साम्राज्य का सबसे मजबूत स्तंभ ध्वस्त हो गया। यद्यपि अब भी कुछ राजपूत सरदार औरंगजेब के साथ बने रहे परन्तु औरंगजेब को राजपूतों की पहले जैसी निष्ठा प्राप्त नहीं हो सकी। इससे दक्षिण में औरंगजेब की स्थिति दुर्बल हो गई।

4.6 औरंगजेब की धार्मिक नीति

औरंगजेब की धार्मिक नीति एक विवादास्पद विषय है। अनेक यूरोपीय और भारतीय इतिहासकारों ने औरंगजेब को एक धर्मांध शासक के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। आधुनिक काल के अनेक विद्वान इस मत को स्वीकार नहीं करते हैं। उनका तर्क है कि औरंगजेब ने सिर्फ गैर–इस्लाम धर्मवालों के प्रति कठोर रवैया नहीं अपनाया बल्कि इस्लाम धर्म की अनेक कुरीतियों को भी बन्द करने का प्रयास किया। हिन्दू मन्दिरों का तोड़ा ही नहीं बल्कि अनेक मंदिरों एवं मठों की दान भी दिए। हिन्दू मनसबदारों की संख्या उसके समय से अधिक हो गई। वस्तुतरू औरंगजेब की अपनी कुछ धार्मिकमान्यताएँ थीं एवं उसी के अनुरूप वह कार्य करता था। उसके अनेक हिन्दू विरोधी कार्य वस्तुतः तत्कालीन राजनीतिक और आर्थिक कारणों से प्रभावित थे। इसलिए, उस पर धर्मांधता का आरोप नहीं लगाया जा सकता। सत्य दोनों के बीच है। वह न तो अति धर्मांध था और न अधिक उदार।

औरंगजेब की धार्मिक नीति तत्कालीन परिस्तियों की देन थी। 17 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक भारत में अनेक महत्वपूर्ण राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तन हो चुके थे। अनेक क्षेत्रीय शक्तियाँ धार्मिक उन्माद बढ़ाकर अपना राजनीतिक स्वार्थ सिद्ध करना चाहती थी। ऐसी शक्तियों में सिख, मराठे, बुन्देले इत्यादि प्रमुख थे। राजपूतों की मुगलों के प्रति स्वामिभक्ति भी कमजोर पड़ती जा रही थी। हिन्दू धर्म के पुनर्जागरण की प्रेरणा एवं विदेशियों (मुगलों) से भारत को स्वतन्त्र कराने का आह्वान भी कुछ विचारक संत एवं कवि इस समय कर रहे थे। मुगल दरबार भी धार्मिक आधार पर विभाजित था। हिन्दू बहुल दल दारा के उदार विचारों का समर्थक था, तो कट्टर पंथी मुस्लिम वर्ग औरंगजेब का उत्तराधिकार के युद्ध में दोनों पक्षों ने इसी आधार पर क्रमशः दारा और औरंगजेब को समर्थन दिया। इसके अतिरिक्त मुगल प्रशासन एवं राजनीति में लम्बे समय से भाग लेने के कारण हिन्दुओं का प्रभाव अधिक बढ़ गया था जिसका दुरूपयोग वह धार्मिक आधार पर करते थे। कहीं–कहीं मुसलमानों को हिन्दू बनाने एवं मस्जिदों को तोड़ने की घटनाएँ भी घट रही थीं। ऐसी स्थिति में हिन्दुओं को नियन्त्रण में रखने एवं मुसलमानों को अपना समर्थक बनाए रखने के लिए औरंगजेब के पास धार्मिक उदारता त्यागने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं था। व्यक्तिगत तौर पर वह कट्टर सुन्नी मुसलमान था। इस्लामी कानून की श्हनफीश विचारधारा का समर्थक होते हुए भी उसने धर्मनिरपेक्ष कानूनों, श्जबाबितश को लागू किया। उसने नैतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को दृढ़ करने वाले अनेक नियम लागू किए जिन्हें सामान्यतः इस्लाम धर्म का विरोधी माना जाता है। इसी प्रकार गैर–इस्लाम धर्मवालों (हिन्दुओं) के विरुद्ध उठाए गए कदमों का उद्देश्य धार्मिक से अधिक राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक था। औरंगजेब ने पहले से चली आ रही कुरान के नियम विरोधीअनेक प्रथाओं पर पाबंदी लगा दी। उसने सिक्कों पर श्कलमा खुदवाना बन्द कर दिया जिससे सिक्के विभिन्न हाथों में जाकर गंदे न हो जाएँ अथवा पैरों तले रौदे नहीं जाएँ। उसने श्नौरोजश का त्यौहार मनाना बन्द कर दिया क्योंकि यह जरथ्रुष्ट सम्प्रदाय का त्यौहार था।झरोखा–दर्शन एवं श्तुलादानश की प्रथा को भी इस्लाम विरोधी मानकर बन्द कर दिया गया। ज्योतिषियों एवं पंचाग बनाने वालों पर भी रोक लगा दी गई, परन्तु औरंगजेब इन नियमों को बहुत कड़ाई से लागू नहीं करवा सका। अपने शासन के ग्यारहवें वर्ष में औरंगजेब ने दरबार में गवैयों एवं संगीत तथा नाच–गाना पर प्रतिबंध लगा दिया। यह प्रतिबन्ध भी पूरी तरह व्यवहार में नहीं लाया जा सका। महल में नौबत एवं अन्य बजाए

जाने वाले वाद्ययंत्रों का प्रचलन बना रहा। औरंगजेब स्वयं वीणा बजाने में दिलचस्पी रखता था। साथ ही उसके समय में फारसी भाषा में भारतीय संगीत पर अनेक उच्चकोटि की पुस्तकें भी लिखी गई। नैतिक दृष्टिकोण से सम्राट ने गाँजा और अफीम को छोड़कर अन्य मादक पदार्थों के उपयोग पर पाबंदी लगा दी। शराब का निर्माण एवं इसकी खरीद–बिक्री बन्द कर दी गई। वेश्याओं और नर्तकियों को विवाह कर लेने अथवा साम्राज्य से बाहर निकल जाने के आदेश दिए गए। इसी प्रकार होली, मुहर्रम, बसंतोसत्व जैसे त्यौहार, जुआ खेलने, तिलक लगाने एवं मूर्तियों के रखने पर भी रोक लगाई गई। कब्रों को छत से ढँकने, स्त्रियों को मजारों पर जाने, दाढ़ी और पाजामे की लम्बाई निश्चित करने के भी आदेश निकाले गये।

औरंगजेब स्वयं भी कुरान के नियमों का कड़ाई से पालन करता था। वह नियम से श्नमाजश पढ़ता युद्धक्षेत्र में भी वह इस नियम का उल्लंघन नहीं करता था। उसने जन्मदिन और राज्याभिषेक के अवसर पर किए जाने वाले भड़कीले आयोजनों को बन्द करवा दिया। भांग, मदिरा, जूआ और अन्य बुराईयों से वह दूर रहता था। रेशमी वस्त्र एवं सोने–चाँदी के सजावट वाले सामानों को बन्द कर दिया गया। उसने इतिहास–लेखन विभाग को बन्द करवा दिया। औरंगजेब के इन सादगीपूर्ण कार्यों से कट्टर मुसलमानों में उसकी छवि निखर गई एवं वह दरवेश अथवा जिंदापीर के नाम से जाना जाने लगा।

संरक्षण देने के लिएऔरंगजेब ने इस्लाम धर्म को प्रोत्साहन एवं भी अनेक कदम उठाए। उसने अनेक पुराने मस्जिदों का जीर्णोद्धार करवाया, उनके लिए घन की व्यवस्था की तथा उनकी समुचित देख भाल के लिए अधिकारी नियुक्त किए। मुसलमान व्यापारियों को करमुक्त व्यापार करने की सुविधा दी गई परन्तु बाद में उन्हें 2) कर देना पड़ा। हिन्दुओं पर यह कर 5% था। राज्य के कुछ पद (पेशकार, करोड़ी इत्यादि) सिर्फ मुसलमानों के लिए ही सुरक्षित कर दिए गए, लेकिन बाद में यह प्रतिबन्ध भी हटा लिया गया। औरंगजेब का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य था श्मुहतसिबों की नियुक्ति करना। इन्हें यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि वे देखें कि शरिया एवं जवाबित के नियमों का लोग उल्लंघन नहीं करें।

औरंगजेब ने हिन्दुओं के प्रति अनुदार नीति अपनाने का मुख्य कारण यह था कि उनमें अधिकांश ने दारा को समर्थन दिया था तथा उनकी साम्राज्य के प्रति निष्ठा कमजोर पड़ती जा रही थी। अतः औरंगजेब ने हिन्दुओं द्वारा धर्मदृपरिवर्तन को प्रोत्साहन दिया। धर्म परिवर्तन करने वाले हिन्दुओं को सरकारी नौकरियाँ, सम्मान एवं धन का लालच दिया गया। सरकार के उच्च पदों से यथा संभव हिन्दुओं को अलग रखने एवं सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर मुसलमानों की नियुक्ति की व्यवस्था की गई। सड़कों पर होली खेलना अथवा होली के लिए पैसा या लकड़ी वसूल करना बन्द कर दिया गया। सती प्रथा, हिन्दू मेलों तथा धार्मिक उत्सवों पर प्रतिबन्ध लगाया गया। राजपूतों के अतिरिक्त अन्य जाति के हिन्दुओं के लिए हथियार लेकर, हाथी, अच्छी नस्ल के घोडों एवं पालकी पर चलने की प्रथा को बन्द कर दिया गया।

हिन्दुओं के सन्दर्भ में औरंगजेब का सबसे अधिक विवादास्पद कार्य था हिन्दू मंदिरों को तोड़ना, उनकी शिक्षण संस्थाओं को बन्द करना तथा जजिया एवं तीर्थ यात्रा कर पुनः लागू करना। मंदिरों में हिन्दू शिक्षा की भी व्यवस्था रहती थी, जहाँ इस्लाम विरोधी प्रचार होता था। यहाँ शिक्षा प्राप्त करने अनेक मुसलमान भी आते थें। इससे इस्लाम धर्म का प्रभाव

घटने का भी खतरा पैदा हो गया था। इसलिए बनारस, मथुरा, उड़ीसा, राजपूता ना और देश के विभिन्न भागों में अनेक मन्दिर एवं उनकी मूर्तियाँ नष्ट कर दी गई। औरंगजेब ने 1679 ई. में अकबर द्वारा हटाए गए श्जजिया को पुनः लागू कर दिया। उसने धर्मदृयात्रा कर भी लगा दिया। औरंगजेब ने सुन्नी मत के अतिरिक्त अन्य धर्मो के प्रचारों (यहाँ तक कि शिया एवं दाऊदी बोहरा) पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया।

अनेक आधुनिक इतिहासकारों के अनुसार औरंगजेब की नीतियाँ धर्म से उतनी अधिक प्रेरित नहीं थी जितना राजनीतिक, नैतिक अथवा आर्थिक कारणों से।

4.7 औरंगजेब की दकन नीति

औरंगजेब के शासन का उत्तरार्द्ध (1681—1707) दक्षिणी शक्तियों से युद्ध करने एवं दक्षिण में अपनी शक्ति सुदृढ़ करने में व्यतीत हुआ। दक्षिण की समस्याओं में वह इस बुरी तरह घिर गया कि उसे उत्तरी भारत की ओर ध्यान देने का अवसर ही नहीं मिला जिसके घातक परिणाम निकले। एक इतिहासकार के शब्दों में जिस प्रकार स्पेन के फोडे ने नेपोलियन को बर्बाद कर दिया उसी प्रकार दक्षिण के नासूर ने औरंगजेब को नष्ट दिया।

दक्षिणी राज्यों से युद्ध के कारण

दक्षिण में इस समय तीन प्रमुख शक्तियाँ थी— बीजापुर और गोलकुण्डा के शिया राज्य तथा मराठे। दो बार दक्षिण का सूबेदार रहने के कारण औरंगजेब दक्षिण की राजनीति से पूरी तरह वाकिफ था। वह उनकी शक्ति को मुगल सत्ता के लिए एक गंभीर चुनौती मानता था। इसीलिए, अपनी सूबेदारी के दौरान उसने इन राज्यों की शक्ति को नष्ट करना चाहा था, परन्तु शाहजहाँ के हस्तक्षेप के कारण वह ऐसा नहीं कर सका। अतः, शासक बनने के बाद उसने दक्षिण में विस्तारवादी नीति अपनायी। उसका उद्देश्य इन राज्यों पर अधिकार कर, मुगल साम्राज्य में मिलाकर अपनी स्थिति सुदृढ़ करना था। औरंगजेब के शासन तक राज्य की आर्थिक स्थिति दुर्बल हो चुकी थी। दक्षिण के राज्यों केपास बहुत अधिक धन था जिससे धन की कमी को दूर किया जा सकता था।इसके अतिरिक्त दक्षिणी रियासतों ने मुगलों को कर देना बन्द कर दिया था। इसलिए उसने दक्षिणी राज्यों के विजय की योजना बनाई।

बीजापुर से संघर्ष

बीजापुर पर आक्रमण करने का उत्तरदायित्व राजा जयसिंह को सौपा गया। 1665 ई. में जयसिंह ने बीजापुर पर आक्रमण किया। जयसिंह का बीजापुर अभियान सफल नहीं हो सका। सुल्तान आदिलशाह ने आक्रमण की सूचना मिलते ही अपनी सुरक्षा की पूरी व्यवस्था कर ली थी। दूसरी तरफ, जयसिंह की तैयारी पूरी नहीं थी। साथ ही, यद्यपि जयसिंह ने गोलकुण्डा के सुल्तान एवं शिवाजी को अपने पक्ष में मिलाया था परन्तु युद्ध आरम्भ होते ही दोनों ने मुगलों का साथ छोड़ दिया। दकन की सभी रियासते मुगल विरोधी इस संघर्ष में संगठित हो गई। इसलिए, यद्यपि जयसिंह को कुछ आरम्भिक सफलताएँ हाथ लगी, परन्तु बीजापुर राज्य कुतुबशाही सेना की सहायता और छापामार युद्ध प्रणाली के आधार पर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने में सफल हुआ। मुगलों को इस युद्ध में न तो एक इंच जमीन ही मिली और न ही धन की प्राप्ति हुई। इसके विपरीत, उनकी शक्ति और प्रतिष्ठा

को गहरी ठेस लगी एवं जन–धन की अपार हानि हुई। क्रुद्ध होकर औरंगजेब ने जयसिंह को वापस लौटने का आदेश दिया। मार्ग में बुरहानपुर में 1667 ई. में जयसिंह की मृत्यु हो गई। जयसिंह की जगह अब शहजादा मुअज्जम को दक्षिण अभियान का नेतृत्व सौंपा गया। 1668 ई. में मुगलों ने रिश्वत देकर किसी प्रकार बीजापुर प्राप्त कर लिया।

1668 से 1676 ई. तक मुगलों ने बीजापुर के विरुद्ध कोई सैनिक अभियान नहीं किया। मुगल सूबेदार बहादुर खाँ ने 1676 ई. में बीजापुर पर आक्रमण कर दिया। जयसिंह के समान उसे भी मुँह की खानी पड़ी। बहादुर खाँ के स्थान पर अब दिलेर खाँ को दक्षिण का सुबेदार बनाया गया। दिलेर खाँ ने 1679 ई. में बीजापुर पर आक्रमण कर दिया। बीजापुर के सुल्तान ने मराठों और अन्य दक्षिणी रियासतों के सहयोग से दिलेर खाँ का आक्रमण भी विफल कर दिया। अप्रैल, 1685 में आजम के सेनापतित्व में मुगल सेना ने बीजापुर पर घेरा डाल दिया। आदिलशाह ने 1686 ई. में आत्मसमर्पण कर दिया। कुछ समय बाद आदिलशाह को कैद कर लिया गया। कैद में ही 1700 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार लम्बे समय के संघर्ष के पश्चात् औरंगजेब अंततः बीजापुर को मुगल साम्राज्य में मिलाने में सफल हुआ। यह उसकी बड़ी सफलता थी।

गोलकुण्डा पर अधिकार

1665 ई. में ही औरंगजेब ने गोलकुण्डा के सुल्तान अब्दुला कुतुबशाह के साथ एक संधि की थी। कुतुबशाह ने मुगल अधीनता स्वीकार कर ली थी। 1672 ई. में कुतुबशाह की मृत्यु के पश्चात् अब्दुल हसन कुतुबंशाह सुल्तान बना। उसके समय में शासन की बागडोर दो ब्राह्मण मंत्रियों मदन्ना और अखन्ना के हाथों में आ गई। शहजादा मुअज्जम ने 1685 ई. में गोलकुण्डा पर आक्रमण किया। एक षड्यंत्र रच कर दोनों मंत्रियों की हत्या कर दी गई। सुल्तान भी सन्धि की शर्तों का पालन ठीक ढंग से नहीं कर रहा था। अतः, औरंगजेब ने 1687 ई. में गोलकुण्डा पर घेरा डाल दिया। सुल्तान बन्दी बना लिया गया, गोलकुण्डा मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। इस अभियान में औरंगजेब को बेहिसाब सम्पत्ति भी मिली।

4.8 मराठों के साथ सम्बन्ध

दक्षिण भारतीय राजनीति में मुगलों के प्रबलतम प्रतिद्वन्दी मराठे थे। मराठों का राजनीतिक उत्कर्ष शाहजी भोंसले और उनके पुत्र शिवाजी के अधीन हुआ। सम्राट बनने के बाद औरंगजेब ने शिवाजी के प्रसार को रोकने के लिए 1660 में दकन के सूबेदार शायस्ता खाँ को आदेश दिया। उसने बीजापुर से समझौता कर शिवाजी पर आक्रमण कर दिया। पूना, चाकन और कल्याण पर मुगलों का अधिकार हो गया। अतः शिवाजी ने 1663 में पूना में शायस्ता खाँ के शिविर पर आक्रमण कर घायल कर दिया। वह कठिनाई से भाग कर अपने प्राणों की रक्षा कर सका। 1664 ई. में शिवाजी ने सूरत के बन्दरगाह को भी लूट लिया। क्रोधित औरंगजेब ने 1665 ई. में आमेर के राजा जयसिंह को शिवाजी के दमन का आदेश देकर दक्षिण भेजा। अतः, परिस्थित वश शिवाजी ने जय सिंह के साथ पुरन्दर की संधि (जून 1665) कर ली। जय सिंह के अनुरोध पर शिवाजी 1666 ई. में औरंगजेब से मिलने आगरा भी गए, परन्तु दरबार में उचित सम्मान नहीं मिलने से कुपित हो उठे। औरंगजेब ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया, परन्तु वह कैद से अपने पुत्र के साथ भाग निकले एवं राजगढ़ पहुँच गए। 1670 ई. से शिवाजी ने मुगलों के विरुद्ध पुनः संघर्ष आरम्भ कर दिया। उन्होंने

सूरत को दूसरी बार लूटा, सूरत से चौथ वसूला और मुगलों को अनेक स्थानों पर पराजित किया। 1674 ई. में राजगढ़ में उन्होंने अपना अभिषेक भी किया।

1680 ई. में शिवाजी की मृत्यु के पश्चात् उनका पुत्र शम्भा जी राजा बना। उसके समय में मराठों की शक्ति घट गई। मुगल सेना ने फरवरी, 1689 ई. में संगमेश्वर पर अचानक आक्रमण कर शम्भा जी को उसके मंत्री एवं अनेक सरदारों के साथ गिरफ्तार कर लिया। शम्भा जी को अपमानित कर उसकी हत्या कर दी गई। यह औरंगजेब की एक बड़ी गलती थी। इस घटना ने मराठों को मुगलों का कट्टर दुश्मन बना दिया। मराठों ने मुगलों से प्रतिशोध लेने के लिए लम्बा संघर्ष चलाया।

शम्भा जी की हत्या के बाद राजाराम के नेतृत्व में मराठों ने मुगलों के विरुद्ध स्वतन्त्रता युद्ध आरम्भ कर दिया। राजाराम की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी ताराबाई ने अपने अल्पवयस्क पुत्र शिवाजी द्वितीय को राजा बनाया एवं स्वातन्त्र्य संग्राम का संचालन किया। मराठों ने अनेक स्थानों पर अधिकार कर लिया। वाध्य होकर औरंगजेब ने मराठों के साथ संधि वार्ता आरम्भ कर दी। मराठों ने शाहू को राजा बनाने, उसे 6 सूत्रों से चौथ और सरदेशमुखी वसूलने का अधिकार देने की माँग की। शाहू ने मुगलों के अधीनस्थ शासन के रूप में रहने को तैयार हो गया। आरम्भ में औरंगजेब ने इस समझौते को मान्यता दे दी, परन्तु बाद में इसे अस्वीकार कर दिया। अतः, मुगल–मराठा संघर्ष जारी रहा। मार्च, 1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् बहादुशाह ने मराठों का राजा स्वीकार कर कुछ समय के लिए मुगल–मराठा संघर्ष को समाप्त कर दिया।

मराठा स्वातंर्त्य संग्राम ने औरंगजेब की कमर तोड़ दी और दक्षिण ही उसकी कब्रगाह बन गई।

4.9 सारांश

अकबर द्वारा निर्देशित मार्ग का अनुसरण करते हुए जहाँगीर और शाहजहाँ ने मुगल साम्राज्य की सुदृढ़ स्थित को अधिक मजबूत की। राजपूत, अफगानों और मराठों से मित्रवत सम्बन्ध बने, प्रशासनिक व्यवस्था मजबूत हुई तथा कला–कौशल की प्रगति हुई। जहाँगीर के समय में मुगलों और सिखों के सम्बन्ध बिगड़ गये, कांधार से मुगलों को हाथ धोना पड़ा, दक्षिणी राज्यों से लम्बा संघर्ष चला जिससे मुगलों को कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। उत्तराधिकार के लिए संघर्ष की परम्परा प्रारम्भ हुई तथा मुगल राजनीति में स्त्रियों और सरदारों का प्रभाव बढ़ा। औरंगजेब (1659–1707) के काल में मुगल राजपूत संघर्ष की एक लम्बी श्रृंखला आरम्भ हुई जो अंततः मुगल साम्राज्य के लिए अहितकर सिद्ध हुई। औरंगजेब की नीतियाँ राजनीतिक, नैतिक अथवा आर्थिक कारणों से प्रेरित थी। दक्षिण की समस्याओं ने औरंगजेब को नष्ट कर दिया।

4.10 संभावित उत्तर

- अकबर जहाँगीर को प्यार से शेखू बाबा कहता था।
- 1605 ई. में जहाँगीर बादशाह गाजी के नाम से आगरा में गद्दी परबैठा।
- बीर सिंह बुन्देला ने अबुलफजल की हत्या की।

- मिर्जा गयासबेग को श्एतमादुद्दौलाश की उपाधि दी गई।
- दान स्वरूप दी गई सम्पत्ति को मददेमआश कहा जाता है।
- जहाँगीर के काल में गुरू अर्जुन देव की हत्या कर दी गई।
- जहाँगीर के काल में कांधार उसके हाथों से निकल गया।
- शाहजहाँ का वास्तविक नाम खुर्रम था।
- शाहजहाँ का काल स्वर्णयुग माना जाता है।
- दकन नीति ही औरंगजेब के लिए अहितकर सिद्ध हुई।
- औरंगजेब के काल में ही मुगल साम्राज्य की सीमा का अत्यधिक विस्तार हुआ।

4.11 सन्दर्भ / अग्र अध्ययन

सन्दर्भ

1. वर्मा, हरिश्चन्द्र : मध्यकालीन भारत, भाग–2, दिल्ली.

2. शर्मा, एल.पी.: मध्यकालीन भारत, आगरा.

अग्र अध्ययन

1. एन.सी.ई.आर.टी.: दिल्ली

इकाई–5

संरचना

इकाई–5 में हम मुगल साम्राज्य के पतन, मुगल प्रशासन मनसबदारी व्यवस्था और मुगल, मराठा तथा अफगान संघर्ष (पानीपत का तृतीय युद्ध) पर विचार करेंगे।

5.1 परिचय

मार्च,1707 में औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही मुगल इतिहास में एक नया मोड़ लिया। औरंगजेब के समय तक मुगल साम्राज्य अपने विकास की चरम सीमा तक पहुँच गया था, परन्तु उसकी मृत्यु के साथ ही उसके उत्तराधिकारियों के समय में शक्तिशाली एवं वैभवशाली साम्राज्य का विघटन और पतन तेजी से हुआ। उसकी मृत्यु के पचास वर्षो के भीतर ही भारत में अनेक नई शक्तियाँ क्षेत्रीय राज्य स्थापित करने में सफल हुई, भारत पर विदेशी आक्रमण हुए, मुगल सम्राट की शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट हो गई, मुगल दरबार गुटबाजी और षड्यंत्रों का अखाड़ा बन गया। इसका लाभ उठाकर अंततः ईस्ट इंडिया कम्पनी भारत में अपना शासन स्थापित करने में सफल हुई। 1857 ई. के विद्रोह का नेतृत्व करने के अपराध में अंतिम मुगल बादशाह बहादुरशाह 'जफरश को गद्दी से हटाकर अंग्रेजो ने भारत में मुगलों की सत्ता समाप्त कर दी तथा भारत को ब्रिटिश ताज का एक उपनिवेश बना दिया।

मुगल प्रशासन भारतीय और ईरानी प्रशासनिक व्यवस्था का सम्मिश्रण था। मुगलों ने राजतंत्रात्मक सत्ता की स्थापना की जिसमें प्रजातांत्रिक मूल्यों के लिए कोई स्थान नहीं था। मुगल प्रशासन बहुत कुछ सैनिक प्रशासन के समान था। यह अत्यधिक केन्द्रीकृत भी था। शासन का स्वरूप धर्म–निरपेक्ष भी था। मुगलों ने इस्लामी राज्य की स्थापना का प्रयास कभी नहीं किया।

मनसबदारी व्यवस्था सैन्य व्यवस्था का मुख्य आधार था। यह व्यवस्था अकबर के समय में आरम्भ हुई। अकबर के समय में सबसे छोटा मनसब 10 काऔर अधिकतम 7000 का था। औरंगजेब के शासनकाल तक मनसबदारों की संख्या करीब 12 हजार तक हो गई थी।

पानीपत का मैदान 16 वीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारतीय राजनीति में निर्णायक भूमिका निभाता रहा। 1526 और 1556 ई. के ही समान 1761 ई. में भी यहाँ निर्णायक युद्ध लड़ा गया। इस युद्ध ने मराठा शक्ति के तीव्र विकास पर रोक लगाकर भारत में मराठा राज्य स्थापित करने के प्रयासों की विफल कर दिया।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- मुगल साम्राज्य के पतन के कारणों से अवगत हो सकेंगे।

- मुगल प्रशासन से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- मुगलकाल में मनसबदारी व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे।
- पानीपत के तृतीय युद्ध (1761) के महत्व पर विचार कर सकेंगे।

5.3 मुगल साम्राज्य के पतन के कारण

बाबर ने मुगल सत्ता की स्थापना की, अकबर ने इसका विस्तार कर इसे स्थायित्व प्रदान किया, जहाँगीर और शाहजहाँ भारत में मुगलों की सत्ता बरकरार बनाए रखे तथा औरंगजेब के समय में दक्षिण में इसका चरम विकास हुआ, परन्तु औरंगजेब के उत्तराधिकारियों ने इस विशाल और वैभवशाली साम्राज्य को खो दिया। मुगल साम्राज्य के पतन के लिए किसी एक शासक को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इसके पतन के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे।

5.3.1 उत्तराधिकार के नियम का अभाव

मुगलों ने भारत में जिस राज्य की स्थापना की उसकी बुनियाद शक्ति पर आधृत थी। बाबर के बाद जितने भी शासक हुए उनमें से अधिकांश ने शक्ति के बल पर गद्दी प्राप्त करने का प्रयास किया एवं शक्ति के बल पर हीसफलता प्राप्त की। बाबर की मृत्यु के बाद हुमायूँ और उसके भाईयों, अकबर के विरुद्ध जहाँगीर, जहाँगीर के विरुद्ध शाहजहाँ, शाहजहाँ के विरुद्ध औरंगजेब, औरंगजेब के विरुद्ध शाहजादा अकबर तथा औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रों में उत्तराधिकार के लिए संघर्ष हुआ। इस परिस्थिति ने विघटनात्मक तत्वों को मजबूत कर साम्राज्य को पतन के कगार पर पहुँचा दिया।

5.3.2 औरंगजेब के दुर्बल उत्तराधिकारी

औरंगजेब के पश्चात् मुगल साम्राज्य के पतन का एक प्रमुख कारण था – गद्दी पर दुर्बल एवं अयोग्य बादशाहों का आना। बहादुरशाह प्रथम से लेकर बहादुरशाह 'जफरश तक जितने भी शासक हुए उनमें न तो चारित्रिक, राजनीतिक, सैनिक अथवा प्रशासनिक क्षमता थी। उनका अधिकांश समय भोग–विलास में व्यतीत होता था। उनमें दृढ़ इच्छा शक्ति का सर्वथा अभाव था। इन दुर्बल शासकों ने बादशाह की शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट कर पतन का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

5.3.3 प्रांतीय सूबेदारों की महत्वाकांक्षा

मुगल बादशाहों की दुर्बलता का लाभ उठा कर प्रांतीय सूबेदारों ने अपना प्रभाव बढ़ाना आरम्भ कर दिया। केन्द्रीय शक्ति के कमजोर पड जाने से वे अनियंत्रित हो उठे। बादशाहों में इतनी शक्ति नहीं थी कि वे अपने सूबेदारों पर नियंत्रण रख सकें। फलस्वरूप मुहम्मदशाह के समय से साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया भी आरम्भ हुई। हैदराबाद, अवध, बंगाल, गुजरात, मालवा, बुन्देलखण्ड, पंजाब, राजपूताना से मुगलों की शक्ति समाप्त हो गई। दक्षिण से मराठों ने उन्हें पहले ही उखाड़ फेंका था। इस प्रकार, मुगल सत्ता दिल्ली के इर्द–गिर्द ही सिमट कर रह गई।

5.3.4 दरबारी षड्यंत्र एवं गुटबाजी

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल दरबार षड्यंत्रों एवं गुटबाजी का अखाड़ा बन गया। दरबारी ही बादशाह के भाग्य का निर्णय करने लगे। जहाँ औरंगजेब के पूर्व दरबारियों और सरदारों ने महावत खाँ, अर्दुरहीम खानखाना,बीरबल, सादुल्ला खाँ, मीरजुमला इत्यादि ने साम्राज्य के हितों की सुरक्षा की थी वहीं बाद के सरदारों ने अपने स्वार्थ में अन्धा होकर बादशाह और साम्राज्य दोनों को क्षति पहुँचायी।

5.3.5 प्रशासनिक भ्रष्टाचार

मुगल प्रशासन में नियुक्तियाँ योग्यता के आधार पर होती थी, परन्तु बाद में महत्वपूर्ण पद बादशाह की व्यक्तिगत इच्छा और सरदारों के दबाव में आकर दिए जाने लगे। परिणामस्वरूप प्रशासनिक व्यवस्था नष्ट हो गई, भ्रष्टाचार एवं रिश्वतखोरी का बाजार गर्म हो गया। महत्वपूर्ण पद एवं मनसब धन के बदले दिए जाने लगे।

5.3.6 मुगलों की विदेशी उत्पत्ति

जब मुगल सत्ता कमजोर पड़ने लगी तो क्षेत्रीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वालों (मराठे, सिख इत्यादि) ने यह प्रचार करना आरम्भ किया कि मुगल विदेशी हैं और उनके हाथों से भारत को मुक्त कराना उनका उद्देश्य है। इस भावना ने मुगलों की दुर्बलता के कारण कुछ सीमा तक मुगल विरोधी तत्वों को अवश्य ही प्रोत्साहित किया।

5.3.7 मुगलों की सैन्य दुर्बलताएँ

जब तक मुगलों की सैन्य शक्ति व्यवस्थित रही साम्राज्य का विकास होता रहा, परन्तु इसके कमजोर पड़ते ही साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया आरम्भ हो गई। अकबर के बाद सैन्य व्यवस्था में दुर्बलता आती गई। मुगल सेना मनसबदारी व्यवस्था पर आधृत थी, परन्तु कालान्तर में यही मुगल सेना की दुर्बलता का प्रमुख कारण बनी। अनावश्यक लगातार युद्धों एवं उत्तराधिकार के संघर्षो में भी मुगल सेना का क्षय हुआ।

5.3.8 धार्मिक कारण

मुगल सम्राटों ने भारत में सामान्यतः धार्मिक निरपेक्षता की नीति अपनायी, परन्तु अकबर के बाद मुगल सम्राटों की धार्मिक नीति धीरे–धीरेसंकीर्ण होती गई। शाहजहाँ और औरंगजेब की संकीर्ण नीतियों ने जाने अनजाने बहुसंख्यक हिन्दुओं को मुगलों का विरोधी बना दिया। उन्हें यह आभास होने लगा कि मुगल उनके साथ धार्मिक भेद–भाव कर रहे हैं और उन पर अत्याचार कर रहे हैं। फलतः मुगल सामान्य जनता की सहानुभूति खोने लगे। इसका लाभ उठाकर राजपूतों, मराठों, जाटों, सतनामियों, सिखों ने विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। धर्म राजनीति पर हाती हो गई। मुगलों को इन्हों दबाना कठिन हो गया। इन विद्रोहों ने साम्राज्य की जड़ों को खोखला कर उसके विनाश का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

5.3.9 आर्थिक कारण

उत्तर मुगल काल में आर्थिक दुर्बलता भी मुगलों के पतन का एक कारण बनी। मुगल काल में हुए अनावश्यक युद्धों और कला–कौशल के विकास पर आवश्यकता से अधिक धन खर्च किया गया। इससे राज्य की स्थिति दुर्बल हो गई। नादिशाह ने तो मुगलों को कंगाल ही

बना दिया। आलमगीर द्वितीय को तो भूखों मरने की नौबत आ गई। ऐसी दुर्बल आर्थिक अवस्था में किसी भी राज्य का टिके रहना असंभव है।

इन कारणों के अतिरिक्त मुगल साम्राज्य की विशालता, संचार एवं परिवहन के साधनों की अपर्याप्तता, दोषपूर्ण सामाजिक संरचना एवं व्यवस्था, शान्ति और सुरक्षा के अभाव, बौद्धिक ह्रास तथा औरंगजेब की दोषपूर्ण नीतियाँ भी मुगल साम्राज्य के विघटन और पतन का कारण बनी।

5.4 मुगल प्रशासन

मुगल प्रशासन भारतीय और ईरानी प्रशासनिक व्यवस्था का सम्मिश्रण था। मुगलों ने राजतंत्रात्मक सत्ता की स्थापना की जिसमें प्रजातांत्रिक मूल्यों के लिए कोई स्थान नहीं थी। मुगल प्रशासन बहुत कुछ सैनिक प्रशासन के समान था। शासन का स्वरूप धर्म–निरपेक्ष भी था।

5.4.1 सम्राट

मुगल प्रशासन के शीर्ष पर स्वयं सम्राट होता था। राज्य की समस्त प्रशासनिक शक्तियाँ उसी के हाथों में निहित थी। वह सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप में भी सार्वभौम था, उस पर किसी का नियंत्रण नहीं था। वह खलीफा की अधिसत्ता को स्वीकार नहीं करता था। उत्तराधिकार के मामले में वंशानुगत तत्व को स्थान दिया गया। अकबर ने सम्राट की स्थिति सुदृढ़ करने के लिए भारत में प्रचलित राजत्व के दैवी सिद्धान्त को अपनाया। परन्तु उत्तर – मुगल काल में जब दुर्बल सम्राट गद्दी पर आए तब वे दरबारियों के हाथों के खिलौने बन गए और उनकी प्रतिष्ठा घटी। अनेक मुगल बादशाहों को तो उनके दरबारियों ने, विशेषकर सैय्यद वंधुओं ने, गद्दी से उतारकर अपमानित किया एवं उनकी हत्या भी की। इसके बावजूद सिद्धान्ततः सम्राट ही–प्रशासन का प्रधान बना रहा।

5.4.2 राज्य के प्रमुख पदाधिकारी

मुगलों के समय में मंत्रिमंडलीय व्यवस्था का विकास नहीं हो सका। मुगल प्रशासन में सम्राट के पश्चात् सर्वोच्च वकील था। धीरे–धीरे प्रशासनिक मामलों में वह गौण हो गया। राज्य का सबसे प्रमुख अधिकारी वजीर बन गया। उत्तर मुगल काल में वजीर सम्राट से भी अधिक शक्तिशाली बन बैठा। समस्त प्रशासन पर उसका नियंत्रण रहता था। उसकी तुलना प्रधानमंत्री से की जा सकती है। वह सैनिक गतिविधियों में भी भाग लेता था। राज्य का राजस्व विभाग भी उसी के अधीन था। अतः उसे प्रमुख दीवान अथवा दीवान–ए–आला भी कहा जाता था। वजीर के पश्चात् खानसामा अथवा मीर सामाँ का स्थान था। सैन्य विभाग का प्रधान मीरबख्शी होता था। राज्य के धार्मिक मामलों का प्रधान सद्र– उस – सद्र होता था। काजी–उल– कजात राज्य का प्रमुख न्यायाधीश होता था। उसकी सहायता के लिए अनेक मुफ्ती होते थे। मुहतसिब नैतिक नियमों का पालन कराने वाला पदाधिकारी था। तोपखाना का प्रमुख मीर–ए–आतिश था। राज्य के सूचना एवं गुप्तचर विभाग का प्रधान दारोगा–ए–डाक चौकी कहलाता था। मीर मुंशी राजकीय आज्ञाओं एवं फरमानों को लिखता था तथा उन्हें उचित स्थान पर अग्रसारित करता था।

5.4.3 न्याय–व्यवस्था

मुगलकाल में न तो लिखित कानून थे और न ही नियमित न्यायालय द्य सिद्धान्ततः सम्राट ही सर्वोच्च न्यायाधीश हुआ करता था। प्रत्येक बुधवार को के सम्राट स्वयं दरबार में बैठकर मुकदमा सुनते थे। अकबर और जहाँगीर न्याय के सम्पादन में व्यक्तिगत दिलचस्पी लेते थे। जहाँगीर ने तो फरियाद सुनने के लिए सोने की जंजीर एवं घण्टी भी लगा रखी थी। उसने शासक बनते ही 12 अधिनियम भी बनाए जिनके द्वारा व्यवस्था स्थापित करने की कोशिश की गई। औरंगजेब के समय में भी कानूनों का एक संग्रह निकाला गया, जो फतवा–ए–आलमगीरी के नाम से जाना जाता है।

5.4.4 सैन्य व्यवस्था

मुगलों की सैन्य व्यवस्था का मुख्य आधार मनसबदारी प्रथा थी। यह व्यवस्था अकबर के समय में आरम्भ हुई। अकबर के समय में सबसे छोटा मनसब 10 का और अधिकतम 7000 का थ। औरंगजेब के शासन काल तक मनसबदारों की संख्या करीब 12 हजार तक हो गई थी। मनसबदारों की सेना के अतिरिक्त मुगलों की सेना में अहदी और दाखिली सेना की टुकड़ियाँ भी थी। मुगल सेना में पैदल और घुड़सवार सैनिक, हाथी, तोपची एवं नौ सैनिक टुकड़ियाँ थी।

5.4.5 राजस्व व्यवस्था

मुगलों की आमदनी के मुख्य स्रोत थे लगान, व्यापारिक कर, सीमा शुल्क, युद्ध में लूट से होने वाली आमदनी, लावारिस सम्पत्ति, राजकीय उद्योगों से होने वाली आय, नजराने और उपहार में मिलने वाली सम्पत्ति इत्यादि। लगान के लिए दहसाला प्रबन्ध किया। शाहजहाँ ने लगान वसूलने के लिए ठेकेदारी व्यवस्था आरम्भ की।

5.4.6 प्रांतीय शासन

समस्त साम्राज्य विभिन्न सूबों में विभक्त था। अकबर के समय में जहाँ 15 सूबे थे वहीं औरंगजेब के समय में इनकी संख्या 20 तक पहुँच गई। सूबाका प्रमुख प्रशानिक पदाधिकारी सूबेदार, सिपहसालार अथवा नाजिम के नाम से जाना जाता था। दीवान, बख्शी, फौजदार, कोतवाल, काजी, सद्र और आमिल प्रशासनिक कार्यो में सूबेदार की सहायता करता था।

5.4.7 स्थानीय शासन

सूबा से छोटी प्रशासनिक इकाई सरकार थी। सरकार का प्रशासन क्रमशः फौजदार, अमलगुजार, काजी, कोतवाल, आदि देखते थे। सरकार विभिन्न परगनों में विभक्त किए गए थे। परगना का प्रशासन शिकदार, आमिल, फोतदार, कारकुन और कानूनगो देखते थे। शासन की सबसे छोटी इकाई गाँव थी। गाँवों का प्रशासन स्थानीय तत्त्वों के सहयोग से चलता था। नगरों का प्रशासन कोतवाल चलाते थे।

5.5 मनसबदारी व्यवस्था

अकबर ने सेना का संगठन मनसबदारी व्यवस्था के आधार पर किया। इस व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक सरदार और सैनिक पदाधिकारी का मनसब (पद) निश्चित किया गया। अबुल फजल के अनुसार मनसबदारों की 66 श्रेणियाँ थी। सबसे छोटा मनसब 10 का और अधिकतम 7000 का था। ये मनसबदार अपनी श्रेणी और पद के अनुरूप सैनिकों की भरती करते थे। सेना के खर्च के लिए इन्हें नकद वेतन अथवा जागीर दी जाती थी। अकबर ने मनसबदारों की दो श्रेणियाँ बना दी– जात और सवार। जात के आधार पर प्रत्येक मनसबदार का पद और वेतन निश्चित किया गया। जात के अनुसार सवार रखने की अनुमति दी गई। प्रत्येक सवार के लिए जात के अतिरिक्त 2 रूपया अधिक वेतन दिया गया। मनसबदारों को सवार (घोड़ा) के अतिरिक्त ऊँट, खच्चर और गाड़ियाँ भी रखनी पड़ती थी। सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अकबर ने घोड़ों को दागने एवं सैनिकों का खाता (हुलिया) रखने की भी व्यवस्था की। अकबर स्वयं मनसबदारों की सेना का निरीक्षण करता था। अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था में एक और सुधार किया कि उसने पाँच हजार और उससे कम के मनसबदारों की तीन उप–श्रेणियाँ बना दी– प्रथम, मध्य एवं तृतीयउप श्रेणी। यह श्रेणी जात और सवार की संख्या के अनुपात में निश्चित की गई। अकबर के प्रयासों से मुगल मनसबदारी व्यवस्था सुदृढ़ हुई।

5.6 पानीपत का तृतीय युद्ध (1761 ई.)

पानीपत का मैदान 16 वीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारतीय राजनीति में निर्णायक भूमिका निभाता रहा था। 1526 और 1556 ई. के समान 1761 ई. में भी यहाँ एक निर्णायक युद्ध लड़ा गया। इस युद्ध ने मराठा शक्ति के तीव्र विकास पर रोक लगाकर भारत में मराठा राज्य स्थापित करने के प्रयासों को विफल कर दिया। मराठे मुगलों की सत्ता समाप्त कर दिल्ली में भी अपना राज्य स्थापित करना चाहते थे। मराठों के बढ़ते प्रभाव से दिल्ली दरबार स्पष्टतः दो गुटों में बँट गया था। भारतीय मुसलमानों का दल मराठों का हिमायती था परन्तु बंगश पठान और रूहेले मराठों के विरोधी थे। वे मराठों और भारतीय मुसलमानों का प्रभाव समाप्त करने के लिए विदेशों से भी सहायता लेने में नहीं हिचके। इसी पृष्ठभूमि में भारत पर अहमदशाह अब्दाली का आक्रमण प्रारम्भ हुआ।

14 जनवरी, 1761 को दोनों पक्षों (मराठा–अब्दाली) के बीच निर्णायक युद्ध हुआ। मराठों ने वीरतापूर्वक युद्ध किया परन्तु उन्हें परास्त होना पड़ा। उनके सभी प्रमुख मराठा सरदार और हजारों सैनिक युद्ध में मारे गए। मराठों की शक्ति एवं भारत में मराठा राज्य स्थापित करने का उनका स्वप्न भंग हो गया।

5.7 सारांश

औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही मुगल साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया शुरू हुई और 1857 ई. के विद्रोह का नेतृत्व करने के अपराध में अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर को गद्दी से हटाकर अंग्रेजों ने भारत में मुगलों की सत्ता समाप्त कर दी। मुगल प्रशासन भारतीय और ईरानी प्रशासनिक व्यवस्था का सम्मिश्रण था। मुगल प्रशासन बहुत कुछ सैनिक प्रशासन के समान था। अकबर ने मुगल सैन्य संगठन को मनसबदारी व्यवस्था पर आधारित किया।पानीपत के तृतीय युद्ध (1761) ने भारत में मराठा राज्य स्थापित करने का स्वप्नभंग कर दिया।

5.8 सम्भावित उत्तर

1857 ई. के विद्रोह का नेतृत्व अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर ने किया।

मुगल साम्राज्य का पतन औरंगजेब के पश्चात् प्रारम्भ हुआ।

मुगल प्रशासन के शीर्ष पर स्वयं सम्राट होता था।

साम्राज्य प्रांतों में विभक्त था प्रांत को सूबा कहा जाता था।

प्रांत (सूबा), सरकारों में, सरकार परगनों में विभक्त थे।

प्रशासन की सबसे छोटी इकाई गाँव थी।

पानीपत का तृतीय युद्ध (1761) मराठों और अहमदशाह अब्दाली के मध्य हुआ था।

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ एवं अग्र अध्ययन

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वर्मा, हरिश्चन्द्र : मध्यकालीन भारत, भाग 2, दिल्ली.

2. शर्मा, एल.पी.: मध्यकालीन भारत, आगरा.

अग्र अध्ययन

1. एन.सी.इ.आर.टी.: मध्यकालीन भारत, दिल्ली.

2. श्रीवास्तव, ए.एल.:मध्यकालीन भारत, आगरा.